हिंसा उन्मूलन में
[illegible] की भागीदारी

नवम्बर 1998 मूल्य : पांच रुपये

मार्गदर्शन के अभाव में भटकती ग्रामीण युवा पीढ़ी

राष्ट्रीय सामाजिक सहायता कार्यक्रमों के अंतर्गत देय सहायता राशि में वृद्धि

ष्ट्रीय सामाजिक सहायता कार्यक्रम (एन.एस.ए.पी.) के मार्ग-निर्देशों को और कारगर बनाने के लिए इनमें संशोधन किया गया है।

यह कार्यक्रम 15 अगस्त 1995 से कार्यान्वित किया जा रहा है। फिलहाल इसके तीन घटक हैं। राष्ट्रीय वृद्धावस्था पेंशन योजना के अंतर्गत 65 वर्ष या इससे अधिक उम्र के निराश्रितों को 75 रुपये प्रतिमाह की दर से केंद्रीय सहायता दी जाती है। राष्ट्रीय परिवार लाभ योजना के अंतर्गत गरीबी रेखा से नीचे जीवन बसर करने वाले परिवारों को मुख्य जीविकोपार्जक की मृत्यु होने पर एकमुश्त सहायता दी जाती है। स्वाभाविक मृत्यु होने पर 5,000 रुपये और दुर्घटना में मृत्यु होने पर 10,000 रुपये दिए जाते हैं। राष्ट्रीय मातृत्व लाभ योजना के अंतर्गत गरीबी रेखा से नीचे के परिवारों की गर्भवती महिलाओं को दो जीवित बच्चों के जन्म तक 300 रुपये की सहायता दी जाती है।

7 जुलाई 1998 को सरकार ने इस कार्यक्रम के दिशा-निर्देशों में संशोधन करने का निर्णय लिया है। राष्ट्रीय परिवार लाभ योजना के अंतर्गत लाभ को मुख्य जीविकोपार्जक की स्वाभाविक मृत्यु होने पर 5,000 रुपये से बढ़ाकर 10,000 रुपये कर दिया गया है।

राष्ट्रीय मातृत्व लाभ योजना के अंतर्गत लाभ को 300 रुपये से बढ़ाकर 500 रुपये कर दिया गया है। बच्चे के जन्म से पहले ही राष्ट्रीय मातृत्व लाभ योजना के अंतर्गत लाभ का समय पर वितरण कर दिया जाएगा। यदि आवेदन करने में विलंब हुआ हो तो लाभ देने से इंकार नहीं किया जाएगा और बच्चे के जन्म के बाद ही लाभ का भुगतान किया जा सकता है।

तीनों योजनाओं के अंतर्गत अब सहायता की मंजूरी और उसका वितरण ग्राम पंचायत/ब्लाक स्तर के कार्यकर्ताओं द्वारा ग्राम सभा की बैठक में किया जाएगा।

साभार : पत्र सूचना कार्यालय

कुरुक्षेत्र

ग्रामीण क्षेत्र एवं रोजगार मंत्रालय की प्रमुख मासिक पत्रिका

वर्ष 44 | अंक 1 | कार्तिक-अग्रहायण 1920 | नवम्बर 1998

कार्यकारी संपादक
बलदेव सिंह मदान

उप संपादक
रजनी

संपादकीय पता
संपादक, 'कुरुक्षेत्र', ग्रामीण क्षेत्र एवं रोजगार मंत्रालय,
कृषि भवन, नई दिल्ली-110001
दूरभाष : 3015014
फैक्स : 011-3015014
तार : ग्राम विकास

संयुक्त निदेशक (उत्पादन)
डी.एन. गांधी

विज्ञापन प्रबंधक
के.एस. जगन्नाथ राव

आवरण सज्जा
एम.एम. मलिक

'कुरुक्षेत्र' की एजेन्सी लेने, ग्राहक बनने और अंक न मिलने की शिकायत, विज्ञापन और प्रसार संख्या प्रबंधक, प्रकाशन विभाग, ईस्ट ब्लाक-4, लेवल-7, आर.के. पुरम, नई दिल्ली-110 066 से करें। विज्ञापनों के लिए विज्ञापन प्रबंधक, प्रकाशन विभाग, ईस्ट ब्लाक-4, लेवल-7, आर.के. पुरम, नई दिल्ली-110 066 से संपर्क करें। फोन : 6105590

मूल्य एक प्रति : पांच रुपये
वार्षिक शुल्क : 50 रुपये
द्विवार्षिक : 95 रुपये
त्रिवार्षिक : 135 रुपये

हिन्दी के अतिरिक्त अंग्रेजी में भी प्रकाशित इस पत्रिका में प्रकाशित लेखों में अभिव्यक्त विचार लेखकों के अपने हैं तथा यह आवश्यक नहीं कि सरकारी दृष्टिकोण भी वही हो।

इस अंक में

- ग्राम विकास बनाम ग्रामीण विकास — प्रकाश दुबे — 4
- उत्तर प्रदेश में पंचायती राज संस्थाओं की वित्तीय व्यवस्था — हरि शंकर सिंह — 7
- डवाकरा की ग्रामीण निर्धनता उन्मूलन में भागीदारी — डा. लक्ष्मीरानी कुलश्रेष्ठ — 11
- ग्रामीण ऋणग्रस्तता: समस्या और समाधान — डा. उर्मिला कुशवाह — 15
- ग्रामीण क्षेत्रों में महिला और बाल विकास कार्यक्रम की भूमिका — बी. बी. मंसूरी — 17
- केन्द्र-राज्य संबंध — रामजी प्रसाद सिंह — 19
- भूमिगत प्रसारण की प्रणेता : उषा मेहता — आशारानी व्होरा — 21
- गुम हो रही है गांव की गरिमा — अंकुश्री — 25
- दो रास्ते (कहानी) — संतोष कुमार राणा — 27
- राजस्थान : मरुस्थलीकरण और समाधान — डा. राम नारायण शर्मा — 28
- भारत का विधान और संविधान — लक्ष्मी मल सिंघवी — 31
- जी का जंजाल बनी : जनसंख्या — दीपक कुमार सिन्हा — 34
- बच्चों की कहानियां (स्थायी स्तंभ) — महावीर त्यागी — 36
- मार्गदर्शन के अभाव में भटकती ग्रामीण युवा पीढ़ी — महर उद्दीन खां — 38
- विज्ञान, प्रौद्योगिकी और ग्रामीण समाज — डा. दिनेश मणि — 40
- ग्रामीण स्वास्थ्य संवर्धन में पंचायतों की भूमिका — सुदेश भारती — 42
- प्याज : सब्जी भी, औषधि भी — डा. विजय कुमार उपाध्याय — 44

रोजगार समाचार

देश में पांच लाख से भी अधिक लोगों द्वारा पढ़ा जाने वाला साप्ताहिक पत्र

इसमें है:-

- रोजगार संबंधी जानकारी
- प्रतियोगी परीक्षाओं के लिए उपयोगी सूचनाएं
- ज्ञानवर्धक लेख तथा अन्य स्तंभ

रोजगार समाचार का प्रकाशन
सूचना एवं प्रकाशन मंत्रालय के प्रकाशन विभाग द्वारा
आर.के.पुरम, नई दिल्ली से किया जाता है

स्थानीय विक्रेता से संपर्क करें अथवा निम्न पते पर लिखें:

सहायक सम्पादक (प्रसार), रोजगार समाचार,
ईस्ट ब्लाक-4, लैवल-5, आर.के.पुरम, नई दिल्ली-110066.
दूरभाष-6107405

पाठकों के विचार

गांव शहरों से कम प्रदूषित हैं

कुरुक्षेत्र का जून 1998 का अंक *गांवों में प्रदूषण : समस्या और समाधान* विषय पर पढ़ा। नि:संदेह देश की एक महत्वपूर्ण समस्या बढ़ते प्रदूषण की है, जिसका समाधान हम सबको मिलकर करना है। डा. विमला उपाध्याय का लेख *गांवों में प्रदूषण : समस्या और समाधान* के अंतर्गत उन्होंने गांवों को पूर्णत: प्रदूषित करार दिया है जबकि आज भी भारत के गांव शहरों की तुलना में शुद्ध हवा-पानी, पर्यावरण की दृष्टि से अधिक स्वच्छ हैं। इसलिए शहरों के लोग गांवों के लोगों की तुलना में ज्यादा अस्वस्थ रहते हैं। फिर भी यदि ग्रामवासियों को स्वच्छता और शुद्धता की शिक्षा दी जाए तो वे पूर्णत: प्रदूषण मुक्त हो सकते हैं।

डा. अलका श्रीवास्तव का लेख *उमड़ते शहर और बिगड़ता पर्यावरण* तथा विकास और पर्यावरणीय शिक्षा पर डा. आर.के. खितौलिया का लेख भी बेहतरीन लगे।

डा. एस.के. शर्मा, असिस्टेंट प्रोफेसर, 195, यू.जी.सी. क्वार्टर्स, झबुआ (म.प्र.)

बिहार में ग्राम पंचायतों के चुनाव नहीं हुए

कुरुक्षेत्र के अप्रैल 1998 अंक में *पंचायती राज व्यवस्था* संबंधी सामग्रियों को रोचक ढंग से छापकर आपने पाठकों के प्रति उपकार किया है। बधाई के पात्र हैं।

24 अप्रैल 1993 में भारत के संविधान संशोधन के बाद भी आज तक ग्राम पंचायतों के चुनाव बिहार में नहीं हुए हैं। यहां अंतिम बार ग्राम पंचायतों के चुनाव 1978 में हुए थे। क्या होगा इस संविधान संशोधन से? 1993 में संविधान संशोधन के तुरंत बाद 23 अगस्त 1993 से ही बिहार राज पंचायत अधिनियम लागू है। लेकिन चुनाव नहीं?

इस अधिनियम के विरुद्ध पटना उच्च न्यायालय में रिट हुआ। फैसला होने के बाद बिहार सरकार द्वारा उच्चतम न्यायालय में 1995 और 1997 में याचिका दायर की गई। अनेक जनतांत्रिक उपायों और कानूनों के अधीन उच्चतम न्यायालय के पास पहुंचने का प्रयास किया गया और आज भी 'पंचायत बचाओ अभियान' की मार्फत प्रयास जारी हैं।

लक्ष्मी साहु, 29, एल.आई.जी. फ्लैट, लोहियानगर, पटना-800020

निर्णय लेने का हक किसको

जुलाई अंक में प्रकाशित विमलेश गंगवार 'दिपि' की कहानी *परधानिन* रोचक, मर्मस्पर्शी तथा मानव-मस्तिष्क को झकझोरने वाली लगी। इस कहानी ने एक बार फिर सोचने के लिए मजबूर किया है कि क्या पूर्ववत की भांति अब भी महिलाओं के अधिकारों का हनन, शोषण होता रहेगा या फिर निर्णय लेने का अधिकार उन्हें मिलेगा? क्योंकि आज भी पुरुष वर्ग महिलाओं को दोहरी मानसिकता से देखता है। इसकी मिसाल कहानी के नायक रामपाल के शब्दों में यूं है—''सरकार ने भी बिना सोचे-समझे कानून बना दिया कि अब पंचायत का काम-काज महिलाएं संभालेंगी। मुंह उघाड़ बेशर्मों की तरह घर से, बाहर आकर मर्दों में बैठेंगी, गांव के मनचले लफंगे दीदे फाड़ कर उन्हें देखेंगे, उन पर फब्तियां कसेंगे...'' क्या यह कथन महिलाओं के अधिकार पर अंकुश नहीं है? दरअसल सदियों की भांति पुरुष वर्ग आज भी महिलाओं को अपना प्रबल और नजदीकी दुश्मन या प्रतिद्वंदी मानता है। कारण अब उनकी स्वतंत्रता, गरिमा व अधिकार का सिंहासन ढोलने लगा है। इसी के कारण पुरुष वर्ग अब यह सोच रहा है कि भले ही सरकार महिलाओं को आरक्षण की परिधि में ला खड़ा करे परन्तु निर्णय तो 'वे' ही करेंगे क्योंकि महिलाएं आखिरकार किसी पुरुष की मां, पत्नी, बहन व वधु ही तो होती हैं। अजीब विडम्बना है कि एक तरफ विज्ञान और प्रौद्योगिकी, प्रगति, नवजागरण, सोच, रहन-सहन ने लोगों के सामान्य जीवन को बदला है तो दूसरी ओर मानव फिर से रूढ़िवादी और कुत्सित भावनाओं का शिकार होने लगा है। होना तो यह चाहिए कि 'स्वयं जीयें और दूसरे को भी जीने दें' की महत्ता अपनाकर महिलाओं को उनके अधिकार प्रदान करें तभी हम 21वीं सदी को 'समानता की शताब्दी' कह पाएंगे।

राम देव सिंह, पटेल नगर, टी.एन.बी. कालेज, (भागलपुर) बिहार

पंचायतों को शिक्षा केन्द्रों की व्यवस्था का अधिकार दिया जाए

मात्र धन खर्च करने से कोई समस्या हल नहीं हो जाती, उसके लिए ठोस कार्य-योजना की जरूरत होती है। एक अध्यापक से पांच कक्षाओं का संचालन करवाने की बात बेमानी होगी, इसके लिए शिक्षकों की व्यवस्था, बुनियादी सुविधाओं तथा पंचायतों को ये अधिकार दिए जाएं कि वे स्थानीय शिक्षा केन्द्रों की पूर्ण रूप से निगरानी रख सकें। तब कोई कारण ऐसा नहीं रहेगा कि हम पूर्ण साक्षरता प्राप्त न कर सकें।

अगस्त 1998 अंक में आज की ज्वलंत समस्या शिक्षा पर पर्याप्त जानकारी देने के लिए धन्यवाद तथा पंचायती राज और बाल मजदूरी पर जानकारी पसंद आई।

भूपाल दत्त भट्ट (बी.डी.), 109 सी.डी.के. पार्क, नया कटरा, इलाहाबाद (उ.प्र.)

ग्राम विकास बनाम ग्रामीण विकास

प्रकाश दुबे

अर्थ विशेषज्ञों का आकलन है कि भारत के वार्षिक बजट का जितना आकार है, उससे कई गुना अधिक राशि ग्रामीण विकास पर खर्च की जा चुकी है। इसके बावजूद न तो गांव पूरी तरह विकसित हो सके और न ग्रामीणों को अशिक्षा, कुरीति, गरीबी तथा दीनता से मुक्त कराने में शत प्रतिशत यश प्राप्त हो सका। हर वर्ष ग्रामीण विकास की नई-नई योजनाएं घोषित होती हैं। उनका क्रियान्वयन शुरू हो जाता है। इसके बावजूद लक्ष्य तथा वास्तविक उपलब्धि के बीच भारी अंतर रह जाता है।

भारत सरकार ने पंचवर्षीय योजना पद्धति को स्वीकार ही इसलिए किया था ताकि देश की 90 प्रतिशत से अधिक जनसंख्या का जीवन-स्तर सुधारा जा सके। उनकी क्षमता का समुचित उपयोग हो जिससे एक तरफ बेरोजगारी और गरीबी को समाप्त किया जा सके, साथ ही ग्रामीण उत्पादों में इतनी वृद्धि की जा सके कि अनाज, दलहन आदि के मामले में देश परावलंबन की जकड़ से मुक्त हो। इस तरह पंचवर्षीय योजनाएं कोर सेक्टर में बेहतर पूंजीनिवेश को प्राथमिकता दे रही हैं ताकि बिजली, सिंचाई, कृषि औजार और बीज मिले, सड़कें तथा शालाएं हों ताकि लोग इनका सही उपयोग करना सीख सकें। अंतत: इससे देश की प्रगति होगी और समृद्धि बढ़ेगी।

योजनाकारों ने पहली दृष्टि में भांप लिया था कि ग्रामीण क्षेत्रों मे विकास किए बगैर देश के विकास की कल्पना निरर्थक है। एक तो देहाती क्षेत्रों में शिक्षा, संचार जैसी बुनियादी आवश्यकताओं को पूर करना। इससे अधिक महत्वपूर्ण काम गांव की मूल इकाई जन के जीवन स्तर में सुधार तथा उसकी क्षमता का सदुपयोग। सतर्कत बरतने के बावजूद इन दो पूरक कामों का आपस में टकराव होत रहा। उदाहरण के लिए ग्रामीण विकास के लिए बांध बनाने क फैसला हुआ। एकमुश्त पूंजीनिवेश कर इतने बड़े बांध बनाने क योजनाएं स्वीकार कर ली गईं जिनसे एक साथ कई राज्यों की हजारों- लाखों एकड़ भूमि सींची जा सके। इस काम के लिए भूमि का अधिग्रहण जरूरी था। फलत: लाखों लोग बेघर हुए। उनकी छोटी जोत क जमीनें बांध के पेट में चली गईं।

हर बेघर को आवास देने की योजना का प्रथम लक्ष्य वे गरीब थ जिनके पास घर नाम की वस्तु नहीं थी। इसमें वनों में रहने वाल आदिवासी शामिल थे जिनके लिए वृक्ष के पत्तों तथा फूस की छाय घर का काम देती थी। जाति की कुरीति के कारण ग्राम सीमा के छो पर रहने वाले मानव-परिवार शामिल थे जिनके लिए सोने तथा सामा रखने के लिए टूटा टप्पर न्यामत था। आर्थिक रूप से परेशान व व्यक्ति बेघर थे जिनकी अलाभप्रद छोटी जोतें कर्ज की शिकार थीं इन बेघरों को आवास दिलाने के लिए केंद्र तथा राज्य सरकारों व स्तर पर सघन प्रयास किए जा रहे थे। तभी बेघरों का नया रेला आया विकास योजनाओं के कारण सड़क, रेलमार्ग, कल-कारखाने बिजलीघर, इमारतों ने जमीन हड़प करना शुरू किया।

थीं तो ये विकास की योजनाएं। इनके पूरे होने पर देश के ग्रामीण चेह पर संपन्नता की मुस्कान आ जाने की आशा की जा रही थी। बहुत ह तक ऐसा हुआ भी परंतु इसके साथ ही नई समस्याएं जन्मीं। इसलिए ग्रा विकास के साथ ही ग्रामीण व्यक्ति के विकास तथा उत्थान की योजनाओ पर काम शुरू हुआ। समन्वित ग्रामीण विकास योजना, राष्ट्रीय रोजग कार्यक्रम, ग्रामीण भूमिहीन रोजगार गारंटी योजना आदि के अंतर्गत दे भर में बिखरे ग्रामीणों को काम देने का काम तेजी से हुआ। सत्तर के दश में महाराष्ट्र ने सूखे से जूझ रहे ग्रामीण जनों को भुखमरी तथा उनके बच को कुपोषण से बचाने के लिए रोजगार गारंटी योजना शुरू की थी। इ योजना के कारण दूर दराज के देहाती इलाकों में रहने वाले किसान त भूमिहीन किसान मौत से मुकाबला कर सके। केंद्र सरकार ने इस योज की प्रशंसा की बल्कि 1989 में राष्ट्रीय रोजगार कार्यक्रम तथा ग्रामी भूमिहीन रोजगार गारंटी योजना को मिलाकर जवाहर रोजगार योजना शु की।

इन योजनाओं का असर है कि गांवों में आम भुखमरी की बुरी ख पहले से कम हुई हैं। यही नहीं, अब आम देहाती अपना जीवन स्तर बढ़ का यत्न करता है। देश के 78 करोड़ लोग साबुन की टिकिया का इस्तेम करने लगे हैं। 70 करोड़ से अधिक जन चाय खरीदते हैं। जिस देश गरीब रोटी के निवाले के अभाव में दम तोड़ देता था वहां अब चाय चुस्की की इच्छा दर्शाती है कि रोजगार योजनाओं ने क्रय शक्ति बढ़ाई

यह बात और है कि आए दिन बढ़ती महंगाई ने कम आय वर्ग को बुरी तरह तोड़ा है। एक सर्वेक्षण के अनुसार गरीब की कमाई का 90 प्रतिशत हिस्सा सिर्फ खाने पर खर्च होता है। देश के कुछ राज्यों में रोटी, नमक तथा प्याज से पेट भरने वालों के लिए प्याज का दाम 40 से 50 रुपये किलो हो जाना बहुत बुरी घटना है। इसका बुरा असर यह होगा कि रोजगार योजनाओं से लाभान्वित वर्ग फिर एक बार अर्ध-बेकारी की स्थिति में जा पहुंचेगा।

ग्रामीण क्षेत्र में विकास की योजनाएं शुरू करने का मकसद गांवों को स्वावलंबी बनाना है। इस तरह की आत्मनिर्भरता पैदा हो जिसके कारण गांव के लोगों को जरूरतों के लिए बाहर हाथ न फैलाना पड़े और न ही कस्बों तथा बड़े शहरों की ओर पलायन की नौबत आए। इसके लिए आवश्यक है कि हर गांव में लोगों को रोजगार हो, अनाज तथा जीवनावश्यक अन्य वस्तुएं खरीदने की क्षमता की सीमा के अंतर्गत उपलब्ध हों। बच्चों के लिए स्कूल हों, बीमारी की स्थिति में निकट ही अस्पताल तथा दवाखाने हों जहां इलाज इतना महंगा न हो कि आर्थिक बोझ से परिवार का ढांचा चरमरा जाए। इन सबके साथ आतंकमुक्त वातावरण हो।

गांवों में कम रोजगार उपलब्ध होने के कारण कुछ लोग मजबूरी में खेतिहर मजदूर की हैसियत से काम कर रहे हैं जबकि कुछ अन्य कम श्रम के अधिक उपार्जन के लालच में शहरों की ओर भाग रहे हैं। इससे गांव में खेतिहर श्रमिकों का अभाव हो गया। देश के कुछ हिस्सों में जाति, संप्रदाय तथा लाठी और निर्बल के भेदभाव ने नए किस्म के माफिया राज को जन्म दिया जिसके कारण सम्मान से जीने की चाहत में कई परिवार गांव छोड़ गए। एक तरफ तो विकास की संकल्पना का आकलन ही गड़बड़ा गया है और दूसरी तरफ लोगों के रेलो ने शहरों में झोपड़ी-बस्तियों के कुकुरमुत्ते उगा दिए हैं। निश्चित ही आय बढ़ गई है परंतु मलिन बस्तियों में रहने वाले एक नई नारकीय जिंदगी के कैदी हो गए हैं। इस विषचक्र ने देश की विकास की रफ्तार बेढंगी कर दी है।

जहां ठीक से काम हुआ वहां शोषण पर रोक लगाकर परिवर्तन की नई छटा को देखा जा सका। बस्तर के अंदरूनी इलाकों में पिछड़ेपन तथा जागृति के अभाव ने नक्सली हिंसा को प्रश्रय दिया। वहां सरकारी ग्रामीण विकास योजनाओं, स्वयंसेवी संगठनों तथा सरकारी मशीनरी में कुछ ईमानदार कल पुर्जों के सही समंजन के कारण आदिवासियों ने सड़क निर्माण का विरोध करने वाले नक्सली नौजवानों को चुप कर दिया। उनका तर्क था कि पढ़-लिखकर मेरा बेटा साइकिल पर आएगा तो उसके लिए सड़क जरूरी है। रामकृष्ण आश्रम जैसी संस्थाओं ने छात्रावास बनाए जहां चूहे पकड़कर खाने वाले बच्चों ने दूध तथा सब्जी का स्वाद चखा। इन पंक्तियों के लेखक ने स्वयं तत्कालीन संभागीय आयुक्त ललित कुमार जोशी के साथ जाकर देखा कि आदिवासी अपनी झोपड़ी के अहाते में टमाटर उगाने लगे तथा गाय और बकरी पालने लगे। आयुक्त ने खुद भी कंक्रीट के मकानों से आदिवासियों की नफरत को देखते हुए उनकी पसंद के झोपड़ीनुमा आवास बनाने के लिए कहा जिनमें धूप भी आए और खुलापन भी हो।

ग्रामीण विकास की संकल्पना के असफल होने का कारण यह है कि कई योजनाएं अव्यावहारिक तथा कागजी थीं। दूसरा कारण यह रहा कि

सदस्यता कूपन

मैं/हम कुरुक्षेत्र का नियमित ग्राहक बनना चाहता हूं/चाहते हैं।

शुल्क : एक वर्ष के लिए 50 रुपये का
दो वर्ष के लिए 95 रुपये का
तीन वर्ष के लिए 135 रुपये का

(जो लागू नहीं होता, उसे कृपया काट दें)

डिमांड ड्राफ्ट/भारतीय पोस्टल आर्डर क्रमांक .... दिनांक .... संलग्न है।

नाम (स्पष्ट अक्षरों में) ....

पता ....

....

पिन ....

इस कूपन को काटिए और इस पृष्ठ की पिछली ओर बने बाक्स के नं. 3 में दिए गए पते पर भेजिए।

ग्राम विकास की योजनाएं नौकरशाही के बड़े वर्ग के लिए लाटरी का टिकट थीं जिनमें उनके नाम का इनाम निकला था। लूट सके तो लूट की इस प्रवृत्ति के कारण कई अच्छी योजनाएं धराशायी हो गईं। समन्वित ग्रामीण विकास की योजनाओं के लिए सालाना 14 अरब से 19 अरब के बीच धनराशि खर्च होती है। गत पांच वर्ष में आई.आर.डी.पी. की 70 प्रतिशत योजनाओं की वसूली नहीं हुई। गांवों के कारीगर से कहा जा रहा था कि तुम अपने शिल्प को मत छोड़ो। हम तुम्हारी मदद करेंगे। शिक्षित ग्रामीण युवा के साथ चार निरक्षर कारीगर मिलकर सवा लाख रुपये का सामूहिक कर्ज ले सकते हैं। एक व्यक्ति का शिक्षित होना आवश्यक है ताकि वह हिसाब किताब रख सके। इस योजना में धन बंटने लगा। सवाल है कि जब देश की रेल से कुल्हड़ विदा हो गया, घरों से घड़े गुम हो गए, त्यौहारों पर काम आने वाली मूर्तियां नदारद हो गईं तब कुम्हार आखिर क्या बनाए? उसका बनाया मिट्टी में जाना है और सिर पर कर्ज का बोझ बढ़ना है। यही हालत मोची, बुनकर, लौहार, यहां तक कि हर शिल्पकार की हो गई है। ग्रामीण विकास की योजनाओं की तरह ग्रामीण व्यक्ति के शिल्प के विकास की योजनाएं भी पूर्णत: सफल नहीं हो सकीं।

देहाती क्षेत्रों में भारी पूंजी लगने के बावजूद उनकी सफलता का ग्राफ झुका होने के कारणों की समय-समय पर तलाश हुई। बीमार को ठीक करने के लिए इलाज किए गए। सहकारिता आंदोलन ग्रामों तथा ग्रामवासियों की सेहत सुधारने के लिए रामबाण दवा के रूप में आजमाया गया। महाराष्ट्र व गुजरात की दूध सहकारी समितियां तथा महाराष्ट्र की गन्ना सहकारी समितियों ने इस विश्वास को खरा साबित किया परंतु देश के अन्य राज्यों में बिना सरकारी नहीं सहकार का नारा छाया रहा। गांवों का नक्शा सुधारने के लिए जन-प्रतिनिधियों की भूमिका को स्वीकारते हुए सांसद निधि के नाम से एकमुश्त राशि देने का निश्चय किया गया। इस योजना के अंतर्गत अनेक अवरोधों के बावजूद बहुत काम हुआ। फिर भी गांव न तो विकसित हो सके और न ग्रामजनों के चेहरों पर स्थायी मुस्कान खिल सकी।

फिर एक प्रयोग हुआ। पंचायती राज के इस प्रयोग में गांव के महिला तथा पुरुष दोनों की सहभागिता थी। अब गांव की अधिकांश योजनाएं गांव वालों को तय करनी थीं। उन्हें फैसला करना था कि गांव का उत्पाद शहर तक ले जाने के लिए खेत की मेड़ पर सड़क बनने दें या नहीं और यह भी कि पहले सड़क बने या फिर सरपंच की हवेली के पास नल लगे।

आजाद भारत का अब तक यह सबसे सफल प्रयोग है जिसके कारण 50 वर्ष से प्रगति की लड़खड़ाती रफ्तार वाले ग्रामीण भारत को रास्ता मिला है। कुछ राज्यों में तो इसका जबरदस्त असर देखने को मिला है। चूंकि ग्रामीण विकास की योजनाओं में पंचायतों का स्वर महत्वपूर्ण हो गया है इसलिए धीरे-धीरे योजनाएं वास्तविकता की धरती पर आ रही हैं और उनकी सफलता आकाश चूमने का इरादा रखती है। इससे यही सबक मिलता है कि लोगों की वास्तविक सहभागिता से ही ग्रामीण विकास हो सकता है। ❑

1. हम दिल्ली से *योजना* **अंग्रेजी, हिन्दी, उर्दू, पंजाबी और उड़िया में**
   कुरुक्षेत्र **हिन्दी और अंग्रेजी में**
   आजकल **हिन्दी और उर्दू में**
   और *बाल भारती* **हिन्दी में** प्रकाशित करते हैं।
2. डिमांड ड्राफ्ट/पोस्टल आर्डर निदेशक प्रकाशन विभाग को नई दिल्ली में देय होना चाहिए।
3. कूपन विज्ञापन और प्रसार संख्या प्रबंधक, प्रकाशन विभाग, ईस्ट ब्लाक 4, लेवल-7, आर.के. पुरम, नई दिल्ली-110066 के पते पर भेजिए।
4. सदस्य बनने के लिए आप हमारे निम्नलिखित केन्द्रों पर भी सम्पर्क कर सकते हैं :

   प्रकाशन विभाग : पटियाला हाउस, तिलक मार्ग, नई दिल्ली-110001; सुपर बाजार (दूसरी मंजिल), कनाट सर्कस, नई दिल्ली-110001; कामर्स हाउस, करीमभाई रोड, बालार्ड पायर, मुंबई-400038; 8, एस्प्लेनेड ईस्ट, कलकत्ता-700069; राजाजी भवन, बेसेंट नगर, चेन्नई-600090; बिहार राज्य सहकारी बैंक बिल्डिंग, अशोक राजपथ, पटना-800004; निकट गवर्नमेंट प्रेस, प्रेस रोड, तिरुअनंतपुरम-695001; 27/6, राम मोहन राय मार्ग, लखनऊ-226019; राज्य पुरातत्वीय संग्रहालय बिल्डिंग, पब्लिक गार्डन्स, हैदराबाद-500004; प्रथम तल, 'एफ' विंग, केंद्रीय सदन, कोरा मंडल, बंगलौर-560034; सम्पादक, पेयोभरा, नौझम रोड, उजान बाजार, गुवाहाटी-1; सम्पादक, योजना (गुजराती), राम निवास, पालदी बस स्टाप के पास, सरखेज रोड, अहमदाबाद

   पत्र सूचना कार्यालय : सी.जी.ओ. काम्पलैक्स, 'ए' विंग, ए.बी. रोड, इंदौर (म.प्र.); 80, मालवीय नगर, भोपाल-462003; के-21, नंद निकेतन, मालवीय मार्ग, 'सी' स्कीम, जयपुर-302003
5. शुल्क प्राप्त होने के बाद नियमित रूप से पत्रिका के अंक मिलने शुरू होने में आठ से दस सप्ताह का समय लगता है।

उत्तर प्रदेश में पंचायती राज संस्थाओं की वित्तीय व्यवस्था

हरि शंकर सिंह *

लोकतांत्रिक विकेंद्रीकरण में पंचायती राज संस्थाओं की अपनी महत्वपूर्ण भूमिका है। वर्तमान में पंचायती राज संस्थाएं भारत के ग्रामीण विकास में अग्रगामी भूमिका निभा रही हैं। प्रशासनिक और राजनैतिक दृष्टि से भी पंचायती राज संस्थाओं का अपरिमित महत्व है। एक तरफ जहां पंचायती राज संस्थाएं स्थानीय स्तर पर अर्थात ग्रामीण क्षेत्र में प्रशासन की आधारभूत इकाइयां हैं वहीं दूसरी तरफ ये स्थानीय स्तर पर नागरिकों को राजनीतिक प्रशिक्षण प्रदान कर उन्हें राजनीति में सहभागी होने योग्य बनाती हैं। इसके अतिरिक्त पंचायती राज संस्थाएं राष्ट्र के विकास से संबद्ध महत्वपूर्ण नीति विषयक मामलों पर आदर्श जनमत-निर्माण में भी सहायक सिद्ध होती हैं।

पंचायती राज व्यवस्था निचले स्तर पर सामाजिक-आर्थिक परिवर्तन तथा विकेंद्रीकरण की एक महत्वपूर्ण विधा है। इस व्यवस्था को सुदृढ़ करने में भारतीय संविधान के 73वें संशोधन, 1992 ने ऐतिहासिक भूमिका निभाई है। भारतीय संविधान के 73वें तथा 74वें संशोधनों के अनुच्छेद 243 (आई) तथा 243 (वाई) में उल्लिखित व्यवस्था के अनुसार नगरीय तथा ग्रामीण स्थानीय निकायों के लिए संसाधनों के संक्रमण तथा उनकी वित्तीय व्यवस्था में सुधार लाने के तरीकों के बारे में संस्तुति देने हेतु उत्तर प्रदेश में 'राज्य वित्त आयोग (पंचायती राज एवं स्थानीय निकाय)' का अप्रैल 1994 में गठन किया गया था। इस आयोग ने नगरीय तथा ग्रामीण स्थानीय निकायों को राज्य के शुद्ध कर राजस्व से संक्रमित की जाने वाली धनराशि तथा अन्य वित्तीय उपाशयों के बारे में अप्रैल 1996 से मार्च 2001 तक के पांच वर्षों की अवधि के लिए अपना अंतरिम प्रतिवेदन राज्य सरकार को दिसंबर 1995 में तथा अंतिम प्रतिवेदन दिसंबर 1996 में प्रस्तुत कर दिया था। उत्तर प्रदेश सरकार ने आयोग द्वारा प्रस्तुत संस्तुतियों को पहली अप्रैल 1997 से कार्यान्वित किए जाने का निर्णय लिया है।

इस लेख को अध्ययन की सुगमता हेतु तीन भागों मे विभाजित किया गया है। प्रथम भाग में राज्य वित्त आयोग (पंचायती राज एवं स्थानीय निकाय) की मुख्य संस्तुतियां तथा उन संस्तुतियों पर राज्य सरकार द्वारा लिए गए निर्णय का अध्ययन किया गया है।

द्वितीय भाग में भारतीय संविधान के 73वें संशोधन की ग्याहरवीं अनुसूची में उल्लिखित 29 कर्त्तव्यों/दायित्वों को प्रशासनिक सुधार और विकेंद्रीकरण आयोग की संस्तुतियों के प्रकाश में देखा गया है।

तृतीय भाग में पंचायती राज संस्थाओं के वित्तीय प्रबंधन तथा उसे और अधिक सक्षम बनाए जाने के उपायों की समीक्षा की गई है तथा अधिक प्रभावी वित्तीय व्यवस्था के लिए सुझाव दिए गए हैं।

राज्य वित्त आयोग की संस्तुतियां

प्रदेश में 83 जिला पंचायतें, 901 क्षेत्र पंचायतें तथा 58,605 ग्राम पंचायतें हैं। राज्य वित्त आयोग (पंचायती राज और स्थानीय निकाय) ने पंचायती राज संस्थाओं को दिए जा रहे सहायक अनुदान की प्रणाली को समाप्त करने तथा इसके स्थान पर राज्य करों की शुद्ध आय का 3 प्रतिशत भाग वित्त विभाग से सीधे पहली अप्रैल 1996 से संक्रमित किए जाने की संस्तुति की थी। राज्य सरकार ने राज्य करों की शुद्ध आय के 3 प्रतिशत की बजाय 4 प्रतिशत भाग को वित्त विभाग से सीधे पंचायती राज्य संस्थाओं को पहली अप्रैल 1997 से संक्रमित किए जाने का निर्णय लिया है। आयोग ने संस्तुति की थी कि संक्रमित धनराशि का 20 प्रतिशत जिला पंचायतों को तथा 80 प्रतिशत भाग ग्राम पंचायतों को दिया जाए। यदि क्षेत्र पंचायतों को पूंजीगत परिसंपत्तियों के अनुरक्षण की जिम्मेदारी सौंपी जाती है तो ग्राम पंचायतों के हिस्से में संक्रमित की जा रही धनराशि में से 10 प्रतिशत राशि क्षेत्र पंचायतों को संक्रमित की जाएगी। उक्त संस्तुति को राज्य सरकार द्वारा स्वीकार कर लिया गया है। आयोग की संस्तुति के अनुसार राज्य सरकार ने यह भी निर्णय लिया है कि पंचायती राज संस्थाओं को कोई अतिरिक्त कर या शुल्क हस्तांतरित न किया जाए।

* विशेष कार्याधिकारी, वित्त विभाग, उत्तर प्रदेश शासन

राज्य की पंचायती राज संस्थाओं की निकायवार अर्थात जिला पंचायत, क्षेत्र पंचायत तथा ग्राम पंचायतों के बारे में की गई आयोग की सिफारिशों तथा उस पर लिए गए राज्य सरकार के निर्णय का वर्णन इस प्रकार है:

जिला पंचायत

त्रिस्तरीय पंचायती राज संस्थाओं के शिखर पर स्थित होने के कारण जिला पंचायतों को ग्रामीण विकास में अग्रगामी भूमिका निभानी होगी। जिस समय राज्य वित्त आयोग ने अपनी संस्तुति दी थी उस समय प्रदेश में 68 जिला पंचायतें थीं जो अब बढ़कर 83 हो गई हैं। जो नई जिला पंचायतें बनाई गई हैं वे पुराने जिलों को ही विभाजित कर बनाई गई हैं। अत: वित्तीय विश्लेषण में कोई अंतर नहीं पड़ता है। उत्तर प्रदेश में जिला पंचायतों के निजी स्रोतों के आय-व्यय का विवरण निम्न तालिका में दिया गया है।

उत्तर प्रदेश जिला पंचायतों के आय-व्यय का प्रारूप

(लाख रुपये में)

वर्ष	आय: कर राजस्व	आय: करेत्तर राजस्व	आय: योग	व्यय: अधिष्ठान व्यय	व्यय: अन्य व्यय	व्यय: योग	अधिशेष (+) घाटा ( ) आय-व्यय
1	2	3	4	5	6	7	8
1992 93	196.37	1789.64	2512.37	1657.54	811.57	2689.26	( )176.90
1993 94	273.35	2590.19	3104.36	1841.35	686.55	2799.03	(+)305.33
1994-95	313.41	3027.57	3340.98	2299.05	978.03	3277.08	(+) 63.90
1995 96	382.69	3027.05	3409.74	2619.40	812.18	3431.58	( ) 21.84

स्रोत: राज्य वित्त आयोग (पंचायती राज एवं स्थानीय निकाय) का अंतिम प्रतिवेदन

क्षेत्र पंचायतें

उत्तर प्रदेश में क्षेत्र पंचायतें, 1952 से ग्रामीण विकास की धुरी रही हैं। क्षेत्र पंचायत या ब्लाक को एक इकाई माना गया है जहां से ग्रामीण विकास के विभिन्न कार्यक्रमों का समन्वय व क्रियान्वियन किया जा रहा है। उत्तर प्रदेश क्षेत्र पंचायत तथा जिला पंचायत अधिनियम, 1961 की धारा 131-क के अनुसार क्षेत्र पंचायतों को जल कर तथा विद्युत कर लगाने का अधिकार दिया गया है। इस संबंध में यह उल्लेखनीय है कि क्षेत्र पंचायतें पीने के पानी या सिंचाई या विद्युत की व्यवस्था नहीं करती हैं। अत: इन कार्यों हेतु कर वसूलने कोई औचित्य नहीं है।

राज्य वित्त आयोग ने अपने अंतिम प्रतिवेदन में यह संस्तुति की है कि जब क्षेत्र पंचायतों को उनकी पूंजीगत परिसंपत्तियों के अनुरक्षण की जिम्मेदारी सौंपी जाए तब ग्राम पंचायतों के हिस्से में संक्रमित की जा रही धनराशि में से 10 प्रतिशत धनराशि क्षेत्र पंचायतों को संक्रमित की जाए तथा क्षेत्र पंचायतों के मध्य बंटवारे की तरीका/फार्मूला 80 प्रतिशत जनसंख्या तथा 20 प्रतिशत क्षेत्रफल के आधार पर किया जाए। राज्य सरकार ने उक्त संस्तुति को स्वीकार कर लिया है।

ग्राम पंचायतें

त्रिस्तरीय पंचायती राज व्यवस्था की सबसे निचले स्तर की सशक्त इकाई ग्राम पंचायत है। प्रदेश में 58,605 ग्राम पंचायतें हैं। आयोग ने भू-राजस्व के समतुल्य धनराशि जो आयोजनागत एवं आयोजनेत्तर पक्ष में, ग्राम पंचायतों को दी जा रही है, को समाप्त किए जाने की संस्तुति की है, जिसे राज्य सरकार ने स्वीकार कर लिया है।

ग्राम पंचायतों के लिए भू-राजस्व पर अधिभार एक अनिवार्य कर है लेकिन सभी ग्राम पंचायतें इस अनिवार्य कर का भी आरोपण नहीं कर पा रही हैं। अत: आयोग ने संस्तुति की है कि भू-राजस्व पर अधिभार जो ग्राम पंचायतों द्वारा वसूल किया जा रहा है, उसे राज्य सरकार के राजस्व तंत्र द्वारा वसूल किया जाना चाहिए। आयोग ने यह भी संस्तुति की है कि भू राजस्व पर अधिभार की न्यूनतम दर जिसका अधिनियम में प्रावधान है, उसे पूरी तरह समाप्त कर दिया जाए तथा सभी ग्राम पंचायतों से इस अधिभार की अधिकतम प्राविधानित धनराशि भू राजस्व का 50 प्रतिशत वसूलने को कहा जाए। आयोग ने यह भी संस्तुति की है कि राज्य करों की शुद्ध आय का 0.25 प्रतिशत ग्राम पंचायतों को उसी तरह संक्रमित किया जाए जिस तरह राज्य के शुद्ध करों के बंटवारे का सुझाव दिया गया है। राज्य सरकार ने इस संबंध में अभी कोई निर्णय नहीं लिया है लेकिन कहा है कि हर किसी से कुछ न कुछ कर अवश्य लिया जाए। आयोग ने 3.125 एकड़ भूमि को भू-राजस्व के अधिभार से मुक्त न किए जाने की संस्तुति की है जिसे राज्य सरकार ने स्वीकार कर लिया है। आयोग ने ग्रामीण क्षेत्रों में पंप सेटों तथा ट्रैक्टरों पर शुल्क लगाए जाने का सुझाव दिया है जिसे राज्य सरकार ने स्वीकार कर लिया है।

राज्य में 1,000 की न्यूनतम जनसंख्या पर एक ग्राम पंचायत गठित किए जाने का प्रावधान है। इस इकाई का आर्थिक रूप से सक्षम होना समय की आवश्यकता है। आयोग ने एक ग्राम पंचायत का गठन 5,000 की न्यूनतम जनसंख्या के आधार पर किए जाने का सुझाव दिया है। राज्य सरकार इस पर अलग से विचार करके निर्णय लेगी।

आयोग ने संस्तुति की है कि जिला पंचायतों को दो हेक्टेयर तथा उससे अधिक के तालाबों को, मछली पालन हेतु ठेके/पट्टे दिए जाने हेतु अधिकृत किया जाए। आयोग ने यह भी संस्तुति की है कि उक्त आय का 50 प्रतिशत जिला पंचायतों द्वारा ग्राम पंचायतों को संक्रमित किया जाना चाहिए। इस संस्तुति को राज्य सरकार ने स्वीकार कर लिया है।

राज्य की ग्राम पंचायतों की आर्थिक संरचना बहुत ही कमजोर है। कर तथा करेत्तर राजस्व को आरोपित करने के जो अधिकार, ग्राम पंचायतों को उत्तर प्रदेश ग्राम पंचायत अधिनियम, 1947 में दिए हुए हैं, अधिकांश ग्राम पंचायतें उसका प्रयोग नहीं करती हैं। इसका मुख्य कारण ग्राम प्रधान है जो जनता का चुना हुआ प्रतिनिधि होता है और अपनी लोकप्रियता कम होने से डरता है। ग्रामीण क्षेत्रों में अशिक्षा, कर उगाही मशीनरी का न होना

आदि अन्य कारण हैं। इस संबंध में यह उल्लेखनीय है कि कोई भी संस्था स्वायत्तशासी तभी हो सकती है जब व्यय की जिम्मेदारियों को कम से कम 50 प्रतिशत निजी स्रोतों से वसूल करे। ग्राम पंचायतों के संबंध में ऐसा नहीं है इसलिए वे परोपजीवी बनी हुई हैं।

दसवें वित्त आयोग की संस्तुतियां तथा ग्रामीण स्थानीय निकाय

दसवें वित्त आयोग ने राज्य के ग्रामीण स्थानीय निकायों को 189.88 करोड़ रुपये 1996-97 से 1999-2000 तक अनुदान दिए जाने की संस्तुति की थी। राज्य सरकार द्वारा दसवें वित्त आयोग के संस्तुत अनुदान के समतुल्य अनुदान दिया जाएगा। इस प्रकार 379.76 करोड़ रुपये प्रतिवर्ष ग्रामीण स्थानीय निकायों को दिया जाना चाहिए जो योजना का एक भाग होगा। आयोग ने संस्तुति की है कि उक्त धनराशि को राज्य की विभिन्न जिला योजनाओं में वितरित किया जाना चाहिए और उक्त धनराशि से 20 प्रतिशत जिला पंचायतों को तथा 80 प्रतिशत ग्राम पंचायतों को दिया जाना चाहिए।

संक्रमण से प्राप्त धनराशि का प्रयोग

पंचायतों को आयोजनेत्तर पक्ष से संक्रमण दिए जाने का उद्देश्य उनकी आर्थिक स्थिति सुदृढ़ करने तथा उन्हें इतना सक्षम बनाना था कि वे अपनी परिसंपत्तियों के अनुरक्षण का दायित्व कुशलतापूर्वक तथा मितव्ययिता के आधार पर कर सकें। ग्रामीण क्षेत्रों में नालियों, शौचालय, भवन, सड़कें आदि के अनुरक्षण का दायित्व पंचायतों को संक्रमण की धनराशि से करना चाहिए।

इस प्रकार राज्य के राज्य वित्त आयोग (पंचायती राज एवं स्थानीय निकाय) का प्रतिवेदन तथा उस पर राज्य सरकार के निर्णय पंचायतों को आर्थिक रूप से सक्षम बनाने की दिशा में एक ऐतिहासिक कदम है। राजकीय करों से प्राप्त होने वाली शुद्ध आय का एक अंश, ग्रामीण पंचायतों को संक्रमित किए जाने से उन्हें न केवल एक सुनिश्चित धनराशि उपलब्ध होगी बल्कि राजकीय करों में होने वाली वार्षिक वृद्धि के फलस्वरूप उसमें बढ़ोतरी होगी। सरकारी राजस्व में ग्रामीण पंचायतों को देय अंश में प्रतिवर्ष वृद्धि होने के फलस्वरूप उनकी आर्थिक स्थिति में पर्याप्त सुधार होगा। राज्य को कर राजस्व से प्राप्त होने वाली शुद्ध आय में से ग्रामीण पंचायतों के अंश को वित्त विभाग द्वारा सीधे संक्रमित किया जाएगा। अत: कई स्तरों के विलंब से छुटकारा मिलेगा तथा ग्रामीण पंचायतों को सीधे धनराशि प्राप्त होगी। प्रत्येक पंचायत को पूर्व में ही ज्ञात रहेगा कि उसे कितनी धनराशि प्राप्त होगी जिससे वह वर्ष भर का आर्थिक प्रबंध कर सकती है।

पंचायती राज संस्थाओं के दायित्वों की स्थिति तथा उसका महत्व

संविधान के 73वें संशोधन की ग्यारहवीं अनुसूची में उन कृत्यों/दायित्वों का उल्लेख किया गया है जिन्हें राज्य सरकारों द्वारा त्रिस्तरीय पंचायतों को सौंपा जाना है। ग्यारहवीं अनुसूची में जो 29 कर्त्तव्य/दायित्व उल्लिखित हैं उनमें अधिकतर कार्य ऐसे हैं जो राज्य सरकार के विभिन्न विभागों/अभिकरणों के द्वारा आयोजनागत पक्ष के अंतर्गत स्वीकृत धनराशि से पहले से ही क्रियान्वित किए जा रहे हैं। संवैधानिक व्यवस्था के तहत यह अपेक्षित था कि उक्त 29 कृत्यों/दायित्वों से संबंधित कार्य तथा उन पर व्यय की जा रही धनराशि राज्य सरकार त्रिस्तरीय पंचायतों को अंतरित कर दें। 73वें संविधान संशोधन की भावना के अनुरूप राज्य में अन्य बातों के अलावा त्रिस्तरीय पंचायतों के कर्त्तव्यों के निर्धारण, जिनका उल्लेख संविधान की ग्यारहवीं अनुसूची में किया गया था, के विषय में सुझाव देने के लिए सितंबर 1994 में श्री जे.एल. बजाज की अध्यक्षता में 'प्रशासनिक सुधार एवं विकेंद्रीकरण आयोग' का गठन किया गया था। बजाज आयोग ने अगस्त 1995 में अपनी संस्तुतियां राज्य सरकार को प्रस्तुत कर दी थीं। इस आयोग ने 32 विभागों के कर्त्तव्यों/दायित्वों को राज्य, जिला पंचायतों, क्षेत्र पंचायतों तथा ग्राम पंचायतों के बीच बंटवारे की संस्तुति की थी। बजाज आयोग की संस्तुतियों पर विचार करने के लिए राज्य सरकार ने तत्कालीन कृषि उत्पादन आयुक्त श्री भोला नाथ तिवारी की अध्यक्षता में एक 'हाई पावर्ड कमेटी' का गठन किया था जिसने अपनी संस्तुति राज्य सरकार को फरवरी 1997 में प्रस्तुत की थी। उक्त 32 विभागों में से अभी तक 26 विभागों द्वारा अपने कार्यों/दायित्वों का अंतरण त्रिस्तरीय पंचायतों को किया गया है।

इस संबंध में यह उल्लेखनीय है कि यदि बजाज आयोग द्वारा 11वीं अनुसूची में उल्लिखित 29 कर्त्तव्यों/दायित्वों के बारे में प्रतिवेदित संस्तुतियों को लागू किया जाता है तो आकलन के अनुसार लगभग 3,000 करोड़ रुपए की धनराशि त्रिस्तरीय पंचायती राज संस्थाओं को अंतरित करनी होगी। अभी तक जिन 26 विभागों द्वारा कर्त्तव्यों/दायित्वों के हस्तांतरण के संबंध में आदेश जारी किए गए हैं उनके अध्ययन से यह विदित होता है कि त्रिस्तरीय पंचायती राज संस्थाओं को केवल पर्यवेक्षक तथा समन्वयक की भूमिका प्रदान की गई है। बहुत कम विभागों में संपादित किए जाने वाले कर्त्तव्यों/दायित्वों के अनुरूप आवश्यक धनराशि अंतरित करने का निर्णय लिया गया है। कर्मचारियों/अधिकारियों को पंचायतों के नियंत्रण में नहीं रखा गया है न ही अपेक्षित वित्तीय हस्तांतरण किया गया है।

डवटेलिंग

ग्राम पंचायतों में वर्तमान में जवाहर रोजगार योजना से प्राप्त धनराशि की प्रभावी भूमिका है। जवाहर रोजगार योजना का प्राथमिक उद्देश्य ग्रामीण क्षेत्रों में बेरोजगार और अल्प रोजगार वाले पुरुषों और महिलाओं दोनों के लिए अतिरिक्त लाभकारी रोजगार का सृजन करना है। इस कार्यक्रम के लिए बड़ी धनराशि ग्राम पंचायतों को प्राप्त हो रही है। राज्य वित्त आयोग की सिफारिश के फलस्वरूप यह ग्राम पंचायतों को सीधे प्रदान की जा रही है। अत: यह उचित प्रतीत होता है कि इस राशियों का जवाहर रोजगार योजना तथा अन्य योजनाओं के अंतर्गत डवटेल करके कार्य कराए जाने चाहिए। इससे कार्यों को संपादित करने में धनराशि की कमी नहीं रहेगी।

पंचायती राज संस्थाओं का कुशल वित्तीय प्रबंध, बजट, लेखा परीक्षा प्रणाली

उत्तर प्रदेश की त्रिस्तरीय पंचायतों की वित्तीय व्यवस्था में जवाहर रोजगार योजना से प्राप्त धनराशि का महत्वपूर्ण योगदान है। स्थिति तो यहां तक है कि ग्राम पंचायतों में जवाहर रोजगार योजना के अलावा अन्य संसाधन जैसे निजी स्रोतों से आय, श्रमदान आदि का नगण्य स्थान है जो 1989 से पहले काफी महत्वपूर्ण होता था। राज्य वित्त आयोग की संस्तुतियों के कार्यान्वयन के फलस्वरूप काफी बढ़ी हुई धनराशि त्रिस्तरीय पंचायतों को 1997-98 तथा उसके पश्चात वर्षों में प्राप्त होगी। इस संबंध में यह उल्लेखनीय है कि पंचायती राज संस्थाओं को प्रशासकीय एवं वित्तीय अधिकारों को उनके दिए जाने का जितना महत्व है, उतना ही महत्व उनके लेखों के रख-रखाव तथा उनकी लेखा-परीक्षा का है जिससे वित्तीय अनुशासन बना रहे। यह भी सर्वविदित तथ्य है कि जितनी ही अच्छी और पारदर्शी लेखा-प्रणाली तथा लेखा-परीक्षा प्रणाली होगी उतना ही उस निकाय का कामकाज अच्छा होगा। श्री जे.एल. बजाज की अध्यक्षता में गठित 'प्रशासनिक सुधार एवं विकेंद्रीकरण आयोग' ने त्रिस्तरीय पंचायतों की वित्तीय व्यवस्था के बारे में अध्ययन कर उसमें सुधार लाने के लिए सुझाव दिए थे। इसकी मुख्य संस्तुतियों में बजट के फार्मेट (प्रारूप) को कम करना, विभिन्न पंचायती राज संस्थाओं की लेखा-परीक्षा किसी एक संस्था से कराए जाने, त्रिस्तरीय पंचायतों के लेखा अनुश्रवण मुख्य वित्त अधिकारी/जिला परिषद से कराए जाने की संस्तुति दी थी। बजाज आयोग ने मुख्य लेखा परीक्षा अधिकारी को विभिन्न पंचायतों के लेखा-परीक्षा के मुख्य बिंदु विधान मंडल के पटल पर प्रस्तुत करने की भी संस्तुति थी। आयोग ने लेखा-परीक्षा रिपोर्ट को पंचायतों की समितियों में भी विचार करने का सुझाव दिया था तथा उसे ऊपर की पंचायतों को भेजने की सिफारिश भी की थी जैसे ग्राम पंचायत, क्षेत्र पंचायत को भेजे, क्षेत्र पंचायत जिला पंचायत को भेजे तथा जिला पंचायत राज्य सरकार को भेजे। इस आयोग ने उपरोक्त व्यवस्था को अनिवार्य बनाए जाने की संस्तुति की थी जिससे पंचायतों में वित्तीय अनुशासन की भावना का विकास हो तथा वित्तीय अनियमितता की संभावना कम से कम रहे। राज्य सरकार द्वारा गठित 'हाई पावर्ड कमेटी' ने उक्त संस्तुतियों को स्वीकार कर लिया है।

उपरोक्त के अलावा ग्राम पंचायतों में धनराशि के बेहतर उपयोग के लिए निम्न उपाए किए जाने आवश्यक हैं:

निधियों के अपवर्तन की अनुमति न दी जाए : राज्य वित्त आयोग द्वारा जो धनराशि संक्रमित की जाए उसे एक जिले से दूसरे जिले तथा एक ग्राम पंचायत से दूसरी ग्राम पंचायत को अपवर्तन करने की अनुमति नहीं दी जानी चाहिए।

धनराशि के अवमुक्त किए जाने हेतु शर्तें : राज्य वित्त आयोग द्वारा संक्रमित की जाने वाली धनराशि गत वर्ष ग्राम पंचायत द्वारा उपयोग की गई धनराशि के उपयोग का प्रमाण-पत्र प्राप्त करने के उपरांत ही स्वीकृत की जाए।

ग्राम पंचायत स्तर पर कार्य योजना : गांवों के विकास के लिए आधारभूत सुविधाओं हेतु ग्राम पंचायतों की बैठकों में गहराई से विचार-विमर्श किया जाना चाहिए और अंतिम निर्णय के आधार पर एक वर्ष विशेष के दौरान किए जाने वाले अनुरक्षण कार्यों की योजना तैयार की जानी चाहिए।

कार्यों का स्वरूप : राज्य वित्त आयोग द्वारा संक्रमित की जाने वाली धनराशि के सापेक्ष अनुरक्षण कार्यों की लागत के बारे में कोई सीमा निर्धारित नहीं है। आमतौर पर ऐसा काम शुरू किया जाना चाहिए जिसका आकार और लागत का स्वरूप इस प्रकार हो, जिससे स्थानीय स्तर पर कार्यान्वित किया जा सके।

सतर्कता समितियां : सुविधाओं के अनुरक्षण कार्यक्रम के अंतर्गत कराए जाने वाले कार्यों के निरीक्षण, रख-रखाव तथा निगरानी के लिए ग्राम पंचायत को हर गांव के लिए सतर्कता समिति बनानी चाहिए। इस समिति में उस व्यक्ति को शामिल किया जाना चाहिए जो उस गांव का निवासी हो तथा पंचायत के निर्णय के अनुसार कार्य में सहायक हो सके।

सृजित परिसंपत्तियों की निर्देशिनी (डाइरेक्ट्री आफ वर्क्स

ग्राम पंचायतों के भ्रमण के दौरान ऐसा देखा गया है कि उनके यह अभिलेखों के रख-रखाव की प्रक्रिया बहुत ही खराब है। विभिन्न योजनाओं के अंतर्गत ग्राम पंचायत में सृजित परिसंपत्तियों का विवरण उपलब्ध नह होता है तथा उससे ग्राम पंचायतों में परिचालित किए जाने वाले विका कार्यक्रमों का सही पर्यवेक्षण नहीं हो पाता तथा कार्यक्रमों में पारदर्शि न रहती है। ग्राम पंचायत की परिसंपत्तियों तथा अनुरक्षण के कराए ग कार्यों की निर्देशिनी (डाइरेक्ट्री आफ वर्क्स) ग्राम पंचायत, विकास खं स्तर तथा जिला स्तर पर निर्धारित रूप में रखे जाने की व्यवस्था हो चाहिए। उक्त व्यवस्था से ग्राम पंचायतों के विकास कार्यक्रमों का अनुश्रव होगा तथा विकास कार्यक्रमों में पारदर्शिता आएगी।

ग्राम पंचायतों के स्थानीय अध्ययनों से निष्कर्ष निकाला जा सकता कि ग्राम पंचायतों के अंतर्गत चलाई जा रही विभिन्न योजनाओं का स पर्यवेक्षण नहीं हो रहा है। विकास कार्यक्रमों की सफलता तभी सुनिश्चि की जा सकती है जब ग्राम पंचायतों द्वारा निजी स्रोतों से वसूल की धनराशि और राज्य सरकार तथा केंद्र सरकार द्वारा दिए गए सहाय अनुदान के अंतर्गत प्राप्त धनराशि का सही उपयोग किया जाए। इस लिए ग्राम पंचायत स्तर, विकास खंड स्तर तथा जिला स्तर पर सतर्क समितियां गठित की जानी चाहिए तथा उनसे कार्यों का अनुश्रवण कर जाना चाहिए। इस संबंध में यह उल्लेखनीय है कि जवाहर रोजगार योज के अंतर्गत ग्राम पंचायत को प्राप्त धनराशि में से 10 प्रतिशत अनुरक्षण स्वीकृत है। उक्त धनराशि तथा ग्राम पंचायतों को निजी स्रोतों से हुई अ से परिसंपत्तियों के रख-रखाव का कार्य संपादित किया जाता है। अ अनुरक्षण कार्यों में डुप्लीकेशन से बचाव हेतु यह आवश्यक है कि ग पंचायत स्तर, विकास खंड स्तर तथा जिले स्तर पर कराए जाने वाले क का पूरा विवरण वर्षवार (डाइरेक्ट्री आफ वर्क्स) उपलब्ध हो।

(शेष पृष्ठ 14

गरीबी अथवा निर्धनता का आशय उस स्थिति से है जिसमें समाज का एक भाग अपने जीवन की बुनियादी आवश्यकताओं को संतुष्ट करने में असमर्थ रहता है। यद्यपि निर्धनता की परिभाषा विभिन्न समाजों में भिन्न-भिन्न प्रकार से दी गई है तथापि इन सबका आधार न्यूनतम या अच्छे जीवन स्तर की कल्पना है। योजना आयोग द्वारा गठित विशेषज्ञ दल की रिपोर्ट के अनुसार ग्रामीण क्षेत्र में प्रति व्यक्ति 2400 कैलोरी तथा शहरी क्षेत्र में प्रति व्यक्ति 2100 कैलोरी प्रतिदिन के हिसाब से जिन्हें प्राप्त नहीं हो पाता, उसे गरीबी की रेखा से नीचे माना गया है। राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण के 50वें दौर के अंतर्गत गरीबी की रेखा को 1993-94 की कीमतों के आधार पर ग्रामीण क्षेत्रों के लिए 228.90 रुपये तथा शहरी क्षेत्रों के लिए 264.10 रुपये प्रति व्यक्ति प्रति माह निर्धारित किया गया है। भारत में निर्धनता रेखा से नीचे रहने वाली जनसंख्या के संबंध में विभिन्न एजेंसियों द्वारा लगाए गए अनुमानों में काफी भिन्नता है। 1993-94 में कमजोर पशुधन, उत्तम बीज, खाद तथा फसल कार्यक्रमों का अभाव—जैसे दोषों से मुक्त नहीं हो सका है। आधुनिक विज्ञान और तकनीकी पर आधारित बड़े-बड़े उद्योगों ने ग्रामवासियों को शहरों का मुखापेक्षी बना दिया है तथा दूसरी ओर इन उद्योगों ने देश की वायु, जल, मिट्टी, वन आदि प्राकृतिक संसाधनों को प्रदूषित किया है; बड़े-बड़े उद्योगों के कारण छोटे-छोटे उद्योगों का विकास अवरुद्ध हो गया है। अतः ग्रामीण दस्तकार,किसान, श्रमिक, गरीबी और बेरोजगारी के चक्र में पिस रहे हैं। ग्रामीण विकास कार्यक्रमों के लिए आबंटित राशि गरीबी के सामने बौनी पड़ जाती है। बढ़ती जनसंख्या ने विकास के सभी दावों को खोखला कर दिया है। विकास के प्रयासों से तत्कालीन राहत के अलावा कोई विशेष सुधार नहीं हुआ है। ग्रामीण निर्धनता किसी वर्ष विशेष में रोजगार के अवसरों से निर्धारित होती है जो एक ओर फसल की उत्पादन की स्थिति तथा दूसरी ओर खाद्यान्न के बाजार भाव पर निर्भर करते हैं। खाद्यान्न की

डवाकरा की ग्रामीण निर्धनता उन्मूलन में भागीदारी

डा. लक्ष्मीरानी कुलश्रेष्ठ *

ग्रामीण क्षेत्रों में 21.68 प्रतिशत तथा शहरी क्षेत्रों में 11.55 प्रतिशत जनसंख्या गरीबी रेखा से नीचे थी। राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण पर आधारित योजना आयोग के संशोधित आकलन के अनुसार 1987-88 में कुल 20.141 करोड़ जनसंख्या—ग्रामीण क्षेत्र में 16.830 करोड़ तथा शहरी क्षेत्र में 3.311 करोड़ जनसंख्या गरीबी रेखा से नीचे जीवन-यापन कर रही थी जबकि 1993-94 में देश में गरीबी रेखा से नीचे कुल जनसंख्या 16.857 करोड़ थी, जिसमें 14.105 करोड़ ग्रामीण तथा 2.752 करोड़ शहरी क्षेत्रों में निर्धनता रेखा से नीचे थे।

राष्ट्रीय स्तर पर गांवों के विकास के लिए उद्घोषित नीतियों के परिणाम सांख्यिकी दृष्टि से प्रभावशाली माने जा सकते हैं लेकिन सूक्ष्म रूप से देखने पर यह परिणाम संतोषजनक नहीं कहे जा सकते। यद्यपि कृषि उपज स्वाधीनता के बाद तीन गुना बढ़ी है लेकिन आज भी कृषि क्षेत्र छोटे-छोटे खेत, ऋण भार, विषम भूमि वितरण, सिंचाई साधनों का अभाव, पूर्ति तथा भाव सरकार द्वारा घोषित वसूली मूल्यों, सार्वजनिक वितरण प्रणाली, गेहूं, चावल के स्टाक इत्यादि पर आधारित होते हैं; इससे ग्रामीण खुदरा कीमतें (खाद्यान्न) प्रभावित होती हैं तथा ग्रामीण निर्धन भी, जो अनाज के प्रमुख खरीदार होते हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में व्याप्त निर्धनता के अन्य कारणों में प्रमुख है—जनसंख्या में तीव्र वृद्धि, पूंजी की कमी, कृषि के अतिरिक्त रोजगार के वैकल्पिक अवसरों की अनुपलब्धता, कृषि पर अधिक जन-दबाव, अशिक्षा, क्षेत्रीय असमानता, संयुक्त परिवार प्रणाली, बाल विवाह प्रथा, निवेश के प्रति उदासीनता आदि।

स्वतंत्रता के बाद गरीबी उन्मूलन और कल्याण कार्यक्रम आमतौर पर हमारे ग्रामीण विकास प्रयासों की रीढ़ रहे हैं। ग्रामीण गरीबी उन्मूलन प्रयत्नों को और अधिक सुव्यवस्थित करने तथा लघु उद्योगों के विकास तथा विस्तार से स्वरोजगार जुटाने के उद्देश्य से 2 अक्तूबर 1980 से संपूर्ण देश में समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम प्रारंभ किया गया। इस कार्यक्रम का उद्देश्य गरीबी रेखा से नीचे जीवन निर्वाह कर रहे चयनित ग्रामीण

* डीन, समाज विज्ञान संकाय, दयालबाग एजूकेशन इंस्टीट्यूट, दयालबाग, आगरा

गरीब परिवारों को उत्पादक संपत्तियां तथा कच्चा माल उपलब्ध कराकर आत्मनिर्भर बनाना है; ताकि वे अपने कारोबार से आय कमाकर गरीबी रेखा को पार कर सकें। अपेक्षित परिसंपत्तियां सरकार द्वारा वित्तीय सहायता देकर तथा वित्तीय संस्थाओं द्वारा ऋण देकर मुहैया कराई जाती हैं। समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम देश के सभी विकास खंडों में एक केंद्र प्रायोजित योजना के रूप में जिला ग्रामीण विकास एजेंसियों द्वारा क्रियान्वित किया जाता है। इसका वित्त पोषण केंद्र तथा राज्य सरकार द्वारा बराबर अनुपात में वहन किया जाता है। केंद्रीय ग्रामीण क्षेत्र एवं रोजगार मंत्रालय केंद्र के हिस्से की निधियों को जारी करने, नीति निर्माण, समग्र मार्गदर्शन, निगरानी और कार्यक्रम के मूल्यांकन के लिए उत्तरदायी है।

समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम की एक उप-योजना के रूप में सितंबर 1982 में ग्रामीण महिला एवं बाल विकास योजना (डवाकरा) प्रारंभ की गई। इस योजना का उद्देश्य गरीबी रेखा से नीचे जीवन यापन करने वाली ग्रामीण महिलाओं के लिए स्वरोजगार के अवसर जुटाना है। महिलाओं को समन्वित ग्रामीण विकास योजना के लाभ मिलने में सामाजिक बाधाओं को देखते हुए इस उप-योजना की आवश्यकता महसूस हुई। इस योजना के अंतर्गत स्वरोजगार तथा आय सृजन को संगठित रूप से प्रोत्साहन देने के लिए महिलाओं के समूह बनाकर महिला-शक्ति को ग्रामीण क्षेत्रों में जागृत किया गया है। चयनित लाभ-प्राप्तकर्ता परिवारों की महिलाएं 10-15 के समूह बनाकर योजना की सदस्य बन सकती हैं तथा समन्वित ग्रामीण विकास योजना से ऋण तथा सहायता का लाभ उठा सकती हैं। 1982 में यह योजना देश के कुछ चुने हुए जिलों में शुरू की गई थी; अब यह लगभग सभी जिलों में चल रही है।

कार्यक्रम की कमियां

वस्तुत: डवाकरा से ग्रामीण गरीब परिवारों की महिलाओं को निश्चित ही लाभ हुआ है, परंतु इस कार्यक्रम के क्रियान्वयन में कुछ कमियां होने के कारण ग्रामीण विकास में वांछित योगदान प्राप्त नहीं हो सका है। इस कार्यक्रम में ऋण और अनुदान के आधार पर मिलने वाली परिसंपत्तियां सही महिलाओं तक नहीं पहुंच पातीं। यही इनके विकास में सबसे बड़ी बाधा है। अनेक समूह निष्क्रिय रहते हैं; 40 प्रतिशत समूह अपने निर्माणकाल में तथा 30 प्रतिशत उत्पादन स्तर पर पहुंचकर निष्क्रिय हो जाते हैं; केवल 10 प्रतिशत ही बिजनेस स्तर तक पहुंच पाते हैं। इसके अतिरिक्त अनेक समूहों ने परंपरागत कार्यकलापों यथा—टेलरिंग, वस्त्र निर्माण, खाद्य प्रसंस्करण, पशुपालन आदि में ही रुचि दिखाई है; कुछ समूह ही गैर-परंपरागत कार्यकलापों में संलग्न हैं। इस योजना के असंतोषजनक परिणामों के लिए प्रमुख कारण इस प्रकार हैं—

- योजना निर्माण में अनेक दोष तथा संगठनात्मक और प्रशासनिक समस्याएं रही हैं। जिस समय योजना को लागू किया गया था, समूह निर्माण बहुत जल्दबाजी में किया गया, उचित मार्गदर्शक सिद्धांतों का अभाव था; पंचायत सदस्यों की रुचि इस बात में अधिक रही कि समूह में सभी वार्डों की महिलाओं का प्रतिनिधित्व हो। इसका परिणाम यह हुआ कि विभिन्न क्षेत्रों में रहने वाली महिलाओं का एक समूह में कार्य करना मुश्किल रहा। यद्यपि बाद के वर्षों में इस कमी को दूर करने का भरसक प्रयास किया गया।
- योजना इस अवास्तविक मान्यता पर आधारित है कि गरीब ग्रामीण परिवारों की महिलाएं जो निरक्षर तथा अनेक सामाजिक बंधनों में जकड़ी हुई हैं, उन्हें 3 से 5 वर्षों में इस योग्य बनाया जा सकता है कि वे एक व्यवसाय को चला सकती हैं। अनुभवों से स्पष्ट है कि यह किसी योग्य संगठन या एजेंसी की सहायता के बिना संभव नहीं हो पाता।
- इस तथ्य को योजना क्रियान्वयन के समय नजरंदाज किया जाता रहा है कि सामान्यत: ग्रामीण निर्धन, विशेष रूप से महिलाएं, किसी उद्यम संचालन में निहित जोखिम को वहन करने हेतु इच्छुक नहीं होतीं, वरन वे निश्चित मजदूरी को प्राथमिकता देती हैं।
- योजना के क्रियान्वयन स्तर पर दो प्रमुख सहायता कार्यक्रम—बाल पोषण तथा घरेलू कार्य के बोझ को हल्का करने हेतु तकनीकी विकास कार्य—प्राय: उपेक्षित रहे हैं।
- डवाकरा स्कीम के अंतर्गत अनेक ऐसे आर्थिक कार्यकलापों का चयन किया गया है जिनका स्थानीय अर्थ व्यवस्था से कोई संबंध नहीं है। अत: इन कार्यक्रमों में जीवन-योग्यता का अभाव है।
- समूह की फिलासाफी तथा सहकारिता की अवधारणा ग्रामीण स्तर पर भली-भांति विकसित नहीं हो पाई है। स्वैच्छिक संगठन भी इस नवीन भूमिका को निभाने के लिए तैयार नहीं हैं; कुछ संगठन निस्संदेह प्रतिबद्ध हैं लेकिन आवश्यक व्यावसायिक कुशलता तथा अनुभव का अभाव है। इसके अतिरिक्त प्रशिक्षण की गुणवत्ता का अभाव, उत्पाद के विपणन में कठिनाइयां, पर्याप्त वित्तीय सहायता न मिल पाना भी योजना की असंतोषजनक प्रगति हेतु उत्तरदायी हैं।

ग्रामीण निर्धन महिलाओं एवं बालकों के विकास जैसे पवित्र उद्देश्य को लेकर डवाकरा स्कीम प्रारंभ की गई थी। अत: इसके प्रभावी क्रियान्वयन हेतु कुछ सावधानियां अपेक्षित हैं:

- लाभार्थी महिलाओं का चयन सावधानीपूर्वक होना चाहिए। प्राय: देखा गया है कि अविवाहित महिलाएं, जिनके पास ... की जिम्मेदारियों का बोझ नहीं है, ही निर्धनता उन्मूलन ... कार्यक्रमों में भाग लेती हैं। अधिकारीगण भी घरों में काम... बोझ तले दबी हुई उन महिलाओं के संबंध में कोई झंझट म... नहीं लेना चाहते जिन्हें भले ही स्थायी रूप से गांव में रहना ... लेकिन जिन्हें योजना में शरीक होने के लिए घर के पुरुषों ... अनुमति आवश्यक है। गांवों की कार्य-संस्कृति तथा वाताव... महिलाओं को घर से बाहर इन योजनाओं के अंतर्गत नहीं...

सका है। इसका दीर्घगामी प्रभाव इन कार्यक्रमों की सफलता पर पड़ता है; अत: महिलाओं में इस कार्यक्रम के प्रति जागरूकता उत्पन्न करना, प्रेरित करना तथा यह विश्वास दिलाना आवश्यक है कि यह कार्यक्रम केवल उन्हीं के लिए है।

- अनेक अध्ययनों के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि डवाकरा के प्रति महिलाओं का आकर्षण कम होने का प्रमुख कारण गरीब परिवार की महिलाओं की घर-गृहस्थी के कार्यों में अति व्यस्तता है। दिन का एक बड़ा भाग पानी और ईंधन एकत्र करते हुए तथा परंपरागत चूल्हे पर कार्य करते हुए बीत जाता है। अत: आवश्यकता इस बात की है कि कम लागत की घरेलू तकनीक उपलब्ध कराई जाए, पानी घर के आस-पास ही उपलब्ध हो, ताकि बचे हुए समय में महिलाएं आय सृजन की योजनाओं का लाभ उठा सकें।
- पर्याप्त स्वास्थ्य सुविधाएं भी ग्रामीण निर्धन महिलाओं की पहुंच में होनी चाहिए। बार-बार के गर्भाधान, प्रसव, शिशु मृत्यु इत्यादि के कारण ये महिलाएं इन योजनाओं से लाभान्वित नहीं हो पातीं।
- परिवार के पुरुषों की सोच में भी परिवर्तन की आवश्यकता है; महिलाओं का भी अपने कार्य के प्रति निष्ठावान, सक्षम तथा आत्मविश्वासी होना जरूरी है तभी उनकी पारिवारिक समस्याएं तथा अन्य संकुचित रूढ़ियां उनके मार्ग में बाधक नहीं बनेंगी।
- महिलाओं को गांव से लेकर मंडल तक की विकास योजनाओं में सम्मिलित किया जाना चाहिए। देश के आर्थिक विकास में अपेक्षित भागीदारी के लिए महिलाओं की शिक्षा, सुरक्षा और स्वास्थ्य पर विशेष ध्यान अनिवार्य है।
- महिलाओं को विस्तृत प्रशिक्षण देने की भी आवश्यकता है, विशेष रूप से विपणन और भंडारण इत्यादि के संबंध में। व्यावसायिक प्रशिक्षण के दौरान ही उन्हें कार्यात्मक साक्षरता भी प्रदान की जानी चाहिए। उदाहरणार्थ यदि उन्हें दरी बनाने का प्रशिक्षण दिया जा रहा है तो उन्हें बताया जा सकता है कि प्रति दरी कितना कच्चा माल आवश्यक है; इसकी लागत क्या होगी, प्रति घंटे कितनी दरी बनेगी तथा प्रति दरी कितनी कीमत होनी चाहिए। इससे महिलाओं को व्यवसाय से संबंधित जानकारी प्राप्त होगी।
- योजना की सफलता के लिए आवश्यक है कि योजना शुरू करने से पूर्व लाभार्थी महिलाओं का दृष्टिकोण, उनका सामाजिक ढांचा तथा मानसिक स्तर, उनकी परंपरागत कौशल, स्थिति, कार्य के घंटे तथा समय तथा भुगतान के तरीके इत्यादि को ध्यान में रखा जाए, तभी महिलाओं की अधिकाधिक भागीदारी संभव है।
- अनुभवों से यह स्पष्ट है कि महिलाएं नेतृत्व की जिम्मेदारियों को वहन करने की इच्छुक नहीं होती। अकुशल नेतृत्व से भी किसी योजना की कार्यप्रणाली प्रभावित होती है। अत: नेतृत्व गुण को विकसित करने हेतु प्रशिक्षण और मार्गदर्शन दिया जाए। बाह्य परिस्थितियों से महिलाओं का साक्षात्कार होना जरूरी है; इसके लिए समय-समय पर प्रशिक्षण शिविर आयोजित किए जा सकते हैं। किसी योजना को स्वीकृत करने से पूर्व इसकी जीवन-योग्यता, कच्चे माल की उपलब्धता, विपणन सुविधाओं, उत्पादित वस्तु की मांग इत्यादि के संबंध में सुनिश्चितता आवश्यक है। किसी ऐसे क्षेत्र में कोई ऐसी योजना प्रारंभ करना, जहां पहले से ही वही स्कीम चल रही है, इसकी सफलता में बाधा बनेगा।
- समूह वहां अधिक सफलतापूर्वक कार्य कर रहे हैं जहां सदस्य महिलाएं पहले से ही एक-दूसरे से परिचित हैं। अत: महिला समूहों के प्रभावी संचालन हेतु सदस्यों का एक ही क्षेत्र का निवासी होना आवश्यक है जिससे उनके बीच परस्पर विचार-विनिमय होता रहे।
- ग्राम पंचायतों में महिला सदस्यों का आरक्षण एक तिहाई सीटों पर है। इन महिला सदस्यों को डवाकरा से संबंधित विशेष उत्तरदायित्व सौंपे जाने चाहिए। समूह सदस्यों के साथ नियमित विचार-विमर्श आवश्यक है, परंतु यह ध्यान रखा जाए कि ग्राम पंचायतों का डवाकरा सदस्यों में राजनीतिक हस्तक्षेप न रहे। स्थानीय नेतृत्व इन डवाकरा समूह के लिए उत्प्रेरण का कार्य कर सकते हैं लेकिन इससे समूह के स्वतंत्र कार्य पर प्रभाव नहीं पड़ना चाहिए। विशेष ओरियंटेशन और प्रशिक्षण कार्यक्रम चलाए जाने चाहिए जिनमें डवाकरा से संबद्ध ग्राम प्रधानों, ग्राम पंचायत की महिला सदस्यों, बैंकरों इत्यादि को शामिल किया जाए ताकि डवाकरा में निहित दर्शन तथा उद्देश्यों को भली-भांति समझा जा सके। प्रत्येक स्तर पर डवाकरा स्टाफ की प्रतिबद्धता बहुत आवश्यक है। जिला स्तर पर डवाकरा योजनाओं का उत्तरदायित्व 4-5 वर्षों के अनुभव वाले सिविल सर्विस कैडर के अधिकारी को सौंपा जा सकता है। पश्चिम बंगाल में यह प्रयोग अत्यंत सफल रहा है। डवाकरा समूह के कार्य-निष्पादन की नियमित मानीटरिंग आवश्यक है। यह पोस्टल मानीटरिंग कार्यक्रम द्वारा हो सकती है अथवा प्रत्येक ग्रुप के लीडर के पास एक मानीटरिंग कार्ड हो सकता है। सुपरवाइजरी स्टाफ को इस कार्ड से समूह तथा व्यक्तिगत सदस्यों के कार्यनिष्पादन के संबंध में संपूर्ण जानकारी मिल सकती है।

यद्यपि पिछले दशक में महिलाओं के लिए प्रारंभ किए गए कार्यक्रमों से महिलाओं की स्थिति में परिवर्तन आया है और उनमें जागृति भी बढ़ी है किंतु महिलाओं को विकास में भागीदार बनाने हेतु जिस प्रकार की सामाजिक-आर्थिक क्रांति की आवश्यकता होनी चाहिए, वह शासन और समाज के सभी वर्गों के सहयोग से एक व्यापक कार्य योजना बनाने और उसका क्रियान्वयन करने पर ही संभव हो सकती है। गरीबी उन्मूलन के साथ-साथ त्वरित आर्थिक विकास के लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए यह जरूरी है कि भारत सरकार में महत्वपूर्ण आर्थिक कार्यक्रमों के लिए जिम्मेदार मंत्रालयों के काम-काज पर प्रभावी रूप से नजर रखी जाए,

उनमें समन्वय स्थापित किया जाए तथा उनकी क्षमताओं पर ध्यान दिया जाए। यह सुनिश्चित करने के लिए कि लक्षित समूहों को पूरे-पूरे लाभ मिलें, पद्धतियों एवं निर्णय प्रक्रिया को सुचारू बनाना अत्यंत अनिवार्य हो गया है। नए विभाग बनाए जाएं जो निर्धनों के लिए विशेष रूप से उपयोगी विषयों और कार्यक्रमों पर ध्यान दें। गैर-सरकारी संगठन भी सरकार को इन प्रयासों में सक्रिय सहयोग दें और इस बात का हरसंभव प्रयत्न करें कि गरीबी उन्मूलन की इन योजनाओं के लाभ उन लोगों तक पहुंच सकें जिन्हें ध्यान में रख कर ये योजनाएं बनाई गई हैं, तभी हम लक्ष्य प्राप्ति में सफल हो सकेंगे। रेडियो एवं टेलीविजन गरीबी उन्मूलन से संबंधित समस्याओं के बारे में चेतना पैदा करने तथा ग्रामीण सामाजिक कार्यकर्ताओं, किसानों-कारीगरों को शिक्षित-प्रशिक्षित करने में भी मददगार बन सकते हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में गरीबी उन्मूलन हेतु यद्यपि सरकार की जिम्मेदारी आने वाले कुछ समय तक बनाए रखनी होगी परंतु निगमित क्षेत्र को अपनी भलाई तथा सरकारी खजाने पर बोझ कम करने के लिए दान-दया की प्रवृत्ति छोड़कर, ग्रामीण क्षेत्रों में पूंजी निवेश का दृष्टिकोण अपनाना होगा। गरीबी उन्मूलन की समस्या से जुड़े सभी पक्षों के परस्पर सहयोग से निश्चय ही अच्छे परिणाम सामने आएंगे।

डवाकरा एक योजना नहीं बल्कि ग्रामीण निर्धन महिलाओं को सामाजिक तथा आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर बनाने और उन्हें उनके अधिकारों के प्रति सचेत करने के लिए एक आंदोलन है तथा सामूहिक प्रयासों और स्व-सहायता द्वारा जीवन की चुनौतियों का सामना करने के लिए उन्हें खड़े होने देने का एक अवसर है ताकि वे समाज में सम्मानजनक स्थान प्राप्त करें और अपने को सशक्त समझ सकें। 13 अक्तूबर 1921 के यंग इंडिया के अंक में महात्मा गांधी ने कहा था कि "मैं गरीब को पैसा, कपड़ा देकर तिरस्कृत नहीं करना चाहता; उसे रोजगार देना चाहता हूं, जो कि उसकी जरूरत है।" गरीबी उन्मूलन के सभी कार्यक्रम जिसमें डवाकरा भी है—इसी फिलासाफी पर आधारित हैं। अत: निर्धनता उन्मूलन हेतु गांवों में ही रोजगार के अवसर तलाश करने की आवश्यकता है। डवाकरा के माध्यम से ग्रामीण निर्धन महिलाओं को आर्थिक स्वतंत्रता मिल जाने के कारण उनके आत्मविश्वास, कार्यक्षमता तथा मानसिक स्तर में वृद्धि होगी, इसलिए यदि महिलाओं को विकास योजनाओं में भागीदार बनाया जाए तो वे भविष्य में देश के आर्थिक विकास में अधिक उल्लेखनीय योगदान दे सकेंगी। यह राष्ट्रहित में है क्योंकि उनके माध्यम से हम इस कटु यथार्थ से मुक्ति पा सकेंगे कि हमारी जनसंख्या का एक बड़ा भाग आज भी बुनियादी सुविधाओं से वंचित है और गरीबी की रेखा से नीचे जीवन बिता रहा है। हम अपनी उपलब्धियों पर गर्व तभी कर सकते हैं, जब समाज के प्रत्येक वर्ग; विशेष रूप से पिछड़े, अभावग्रस्त तथा महिला वर्ग को समान अवसर उपलब्ध करा सकें। यह निस्संदेह एक दुरुह कार्य है।

गरीबी उन्मूलन के सरकारी प्रयासों में जनसंख्या वृद्धि, शिक्षा तथा बुनियादी सुविधाओं की कमी तथा पुरानी प्रशासनिक एवं वित्तीय प्रक्रियाओं जैसे अनेक प्रतिकूल पहलुओं के कारण बाधाएं आती हैं। इन पहलुओं को ठीक करना भी उतना ही महत्वपूर्ण है, जितना गरीबी उन्मूलन कार्यक्रम चलाना। अत: निर्धनता उन्मूलन कार्यक्रम के साथ-साथ ग्रामीण विकास के कई अन्य कार्यक्रमों को भी हाथ में लेना आवश्यक है यथा—बुनियादी ढांचे का विकास, बेहतर संचार व्यवस्था, उत्पादकता बढ़ाने हेतु बिजली की व्यवस्था, पर्यावरण संरक्षण, प्राकृतिक संसाधनों का सुनियोजित उपयोग, मानव संसाधनों के विकास के लिए सबके लिए शिक्षा तथा कौशल सिखाने की व्यवस्था, प्राथमिक स्वास्थ्य सुविधाओं का प्रावधान, विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी को निचले स्तर तक ले आना इत्यादि।

ग्रामीण महिलाएं समाज की महत्वपूर्ण इकाई हैं, उनके विकास पर ध्यान दिए बिना ग्रामीण विकास की कोई भी योजना सफल नहीं हो सकती। जब कोई परिवार बहुत गरीब हो तो महिला कार्यक्रमों का महत्व और भी बढ़ जाता है। यदि महिलाएं रचनात्मक कार्यों में एकजुट होकर कार्य करें और उन्हें एक दिशा में आगे बढ़ने के लिए उचित मार्गदर्शन, वित्तीय सहायता और प्रेरणा मिल जाए तो गरीबी की रेखा से नीचे के परिवारों को खुशहाल बनाने का मुश्किल काम आसान हो जाएगा। ❑

(पृष्ठ 10 का शेष) उत्तर प्रदेश में पंचायती राज संस्थाओं की वित्तीय व्यवस्था

निष्कर्ष

उक्त विवेचन से स्पष्ट है कि राज्य वित्त आयोग (पंचायती राज एवं स्थानीय निकाय) का प्रतिवेदन तथा उन प्रतिवेदनों पर राज्य सरकार द्वारा लिए गए निर्णय राज्य की पंचायती राज संस्थाओं के लिए आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर होने की दिशा में ऐतिहासिक कदम साबित होगा। आवश्यकता है कि त्रिस्तरीय पंचायतें भी उसी भावना से अपने निजी स्रोतों का भरपूर दोहन करें तथा प्राप्त धनराशि का समुचित उपयोग करें। प्राप्त धनराशि का समुचित उपयोग भी पंचायतों की आत्मनिर्भर बनाने के लिए आवश्यक होगा। महान राजनीतिक विचारक प्रोफेसर हैराल्ड लास्की के शब्दों में 'प्रजातांत्रिक शासन का पूर्ण लाभ हमें तब तक नहीं मिल सकता जब तक हम स्वीकार नहीं करते कि सभी समस्याएं केंद्रीय नहीं होतीं और ऐसी अकेंद्रिय समस्याओं के समाधान हेतु अपेक्षित निर्णय उसी स्थान पर तथा उन्हीं व्यक्तियों द्वारा किया जाना चाहिए जहां उसका गंभीरतम अनुभव हों। आज भी ग्रामीण जनसंख्या को बेरोजगारी तथा कम रोजगार सर्वाधिक कुप्रभावित कर रहे हैं। पंचायतों के सामाजिक-आर्थिक विकास का सपना अब आर्थिक आत्मनिर्भरता से पूरा होगा। ❑

ग्रामीण ऋणग्रस्तता : समस्या और समाधान

डा. उर्मिला कुशवाह*

स्वतंत्रता के पश्चात पंचवर्षीय योजनाओं के माध्यम से ग्रामीण विकास में कृषि विकास को अधिक महत्व दिया गया। इसके लिए कृषि और कृषक की उत्पादकता पर प्रतिकूल प्रभाव डालने वाले संस्थागत ढांचे को बदलने के लिए योजनाबद्ध ढंग से प्रयास किए गए। लेकिन स्वतंत्रता के 50 वर्षों बाद भी कुछ बड़े किसानों को छोड़कर देश का आम किसान कर्ज के बोझ तले दबा हुआ है। वह ऋणग्रस्तता के कारण न तो अपना विकास कर सका है और न ही कृषि को उन्नतिशील बना सका है। ग्रामीण ऋणग्रस्तता के संबंध में शाही कृषि आयोग ने कहा है कि "भारतीय किसान ऋण में जन्म लेता है, ऋण में पलता है और ऋण में ही मरता है।" उपर्युक्त कथन देश के किसानों की कमजोर आर्थिक स्थिति को सही ढंग से स्पष्ट करता है।

कारण

अनुत्पादक सामाजिक व्यय : भारतीय किसान सामाजिक रूढ़ियों तथा परंपराओं से जकड़ा हुआ है जिसके कारण उसे कई अनुत्पादक कार्यों जैसे जन्म, मुंडन, विवाह, मृत्युभोज आदि संस्कारों पर व्यय के लिए ऋण लेना पड़ता है।

भूमि पर जनसंख्या का अधिक भार : भूमि पर आश्रित परिवारों की संख्या में वृद्धि हो रही है। परिवार का भरण-पोषण कृषि से प्राप्त आय से नहीं हो पाता है तथा आय का अन्य कोई साधन न होने के कारण किसान को ऋण का सहारा लेना पड़ता है।

प्राकृतिक संकट : कभी-कभी अतिवृष्टि, अनावृष्टि, टिड्डियां, पाला, ओले आदि से फसल नष्ट हो जाती है। इस प्रकार प्राकृतिक आपदाओं के कारण भी कृषक को ऋण लेना पड़ता है।

सहायक उद्योग धंधों का अभाव : गांवों में अन्य कोई उद्योग धंधे नहीं हैं, जिनसे किसान खाली समय में काम कर सकें। अत: वर्ष भर की आवश्यकताओं की पूर्ति कृषि से प्राप्त सीमित आय से करने में वे अपने को असमर्थ पाते हैं।

इनके अलावा कम आय और निर्धनता, पैतृक ऋण, महाजनों और साहूकारों की कुरीतियां, कृषकों का अशिक्षित होना, उचित विपणन व्यवस्था का अभाव आदि कारण भी किसानों को ऋण लेने के लिए मजबूर करते हैं।

सुझाव

ग्रामीण ऋणग्रस्तता कृषि विकास में एक बड़ी बाधा है। ग्रामीण अर्थ व्यवस्था का उत्थान करने तथा कृषि क्षेत्र को आत्मनिर्भर करने के लिए ग्रामीण ऋणग्रस्तता की समस्या को हल किया जाना नितांत आवश्यक है जिससे कृषकों को ऋणग्रस्तता के शिकंजे से मुक्ति मिल सके। इस संबंध में निम्नांकित सुझाव प्रस्तुत हैं :

(1) गांवों में रोजगार के अवसरों में वृद्धि करनी होगी, जिससे कृषक अपने समय का सदुपयोग कर सकें। कृषि कार्य समाप्त होने के बाद गांवों में कोई भी ऐसा साधन नहीं है जिससे कृषक अपना दैनिक पारिवारिक व्यय निकाल सकें।

(2) कृषि पर बढ़ते हुए जनसंख्या के भार को कम करने के लिए कृषकों को परिवार नियोजन के लिए प्रेरित किया जाए।

(3) कृषकों के पुराने ऋणों को समाप्त करने या कम करने के लिए सरकार को सहयोगात्मक रवैया अपनाना चाहिए।

(4) प्रत्येक कृषक को सहकारिता के क्षेत्र में लाने का प्रयास करना चाहिए। इसके लिए उसे सहकारिता के लाभों से अवगत कराया जाए।

(5) कृषकों को सस्ती साख सुविधाएं उपलब्ध कराने के लिए ग्रामीण अंचलों में क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक तथा साख संस्थाओं का विस्तार किया जाए और ऋण उपलब्ध कराने की प्रक्रिया सरल बनाई जाए।

इस प्रकार कहा जा सकता है कि कृषि क्षेत्र में उत्पादकता बढ़ाने के लिए किसानों को ऋणग्रस्तता से मुक्ति दिलाना बहुत जरूरी है, जिससे किसान अपनी क्षमता का सही उपयोग कर सकें। ❑

* सहायक प्राध्यापक, जे.सी. मिल्स कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, ग्वालियर

कार्यक्रम के अन्य महत्वपूर्ण बिंदु

- ग्रामीण क्षेत्रों में 'डवाकरा' परियोजनाओं को प्रोत्साहित करने के लिए 'कपार्ट' द्वारा स्वयंसेवी संस्थाओं को भी समर्थन प्रदान किया जाता है।
- वर्ष 1997-98 के बजट में इस कार्यक्रम के लिए 65 करोड़ रुपये का प्रावधान किया गया है।

डवाकरा की उपलब्धियां

ग्रामीण क्षेत्रों में महिला और बाल विकास कार्यक्रम की उपलब्धियों को तालिका में प्रदर्शित किया गया है। तालिका से स्पष्ट है कि जहां छठी योजना में महिला ग्रुपों की संख्या 3,038 थी, सातवीं योजना में बढ़कर 28,031 और आठवीं योजना में 1,41,397 हो गई। वहीं महिला सदस्यों की संख्या 0.52 लाख से बढ़कर आठवीं योजना में 22.66 लाख हो गई।

पंचवर्षीय योजनाओं में डवाकरा की उपलब्धियां

पंचवर्षीय योजना का नाम	महिला ग्रुप की संख्या	महिला सदस्य संख्या (लाख में)
छठी	3,038	0.52
सातवीं	28,031	4.70
आठवीं	1,41,397	22.66

इस प्रकार 'डवाकरा' ग्रामीण महिलाओं की सामाजिक और आर्थिक स्थिति में सुधार लाने के लिए जो कार्य कर रहा है, वह सराहनीय है। इसके द्वारा ग्रामीण महिलाएं आत्म निर्भरता और ओर अग्रसर हुई हैं और राष्ट्र के उत्थान में उनकी भागीदारी कई गुणा बढ़ी है। इस कार्यक्रम के माध्यम से सरकार ने व्यावहारिक रूप से महिलाओं को पुरुषों के समान अधिकार प्रदान करने में जो सफलता प्राप्त की है वह अपने आप में एक ज्वलंत उदाहरण है। ❑

निर्धन ग्रामीणों की सेवा पर विश्व-बैंक मुग्ध

रेणु सिंह

भारत में हजारों स्वयंसेवी संगठन जनसेवा के काम में लगे हैं। इनमें स्वतंत्रता-प्राप्ति से पहले स्वतंत्रता सेनानियों द्वारा गठित अनेक संस्थाएं ग्रामीण क्षेत्रों में प्रशंसनीय कार्य कर रही हैं। परंतु स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद सरकारी अनुदान पाने की लालच में असंख्य स्वयंसेवी संगठन पंजीकृत हो गए। उनमें से कुछ संगठनों की सेवाएं अत्यंत असंतोषजनक पाई गईं। इसलिए ग्रामीण क्षेत्र एवं रोजगार मंत्रालय द्वारा स्थापित और स्वयंसेवी संगठनों के शीर्ष-संगठन कपार्ट ने सैंकड़ों संस्थाओं के नाम काली सूची में डाल दिए हैं। किंतु दक्षिण भारत में कार्यरत 'मर्यादा' नामक एक संस्था की विश्व-बैंक ने अपनी रिपोर्ट में भूरि-भूरि प्रशंसा की है। इस संस्था ने अपने क्षेत्र के ग्रामीण निर्धन परिवारों को बैंकों से सहायता दिलाने और उन्हें स्वावलंबी बनाने की दिशा में उत्कृष्ट काम किया है। यह बैंकों द्वारा ऋण देने की नीति के बारे में ग्रामीण गरीबों को जानकारी देती है और उससे अधिकतम लाभ उठाने में उनकी सहायता करती है।

विश्व विकास पर अपनी ताजा रिपोर्ट में विश्व-बैंक ने कहा है कि विकास के संबंध में गरीबों को जागरूक बनाना महत्वपूर्ण कार्य है। 'मर्यादा' संस्था ने इस दिशा में बंगला देश के ग्रामीण बैंक से भी अधिक उल्लेखनीय कार्य किया है। इसकी वजह से आज किसान बैंकों से काफी फायदा उठा रहे हैं। 'मर्यादा' एक गांव में अधिकतम पांच वर्ष काम करती है। वह ग्रामीणों का बैंकों से सीधा संपर्क कराती है और ग्रामीणों में यह भावना विकसित करती है कि बैंकों से लेन-देन का बढ़िया रिश्ता बनाने में उन्हें स्थायी लाभ होगा बशर्ते कि ऋण का सदुपयोग किया जाए और कष्ट उठाकर भी ऋण को निर्धारित समय पर चुका दिया जाए।

'मर्यादा' ऋण संबंधी विवादों को निपटाने में भी मदद करती है और ग्रामीणों को स्वावलंबी बनाने के लिए प्रशिक्षण प्रदान करने का भी प्रबंध करती है। यही नहीं, यह संस्था ग्रामीणों को कच्चा माल मंगाने और कृषि उपकरण आदि खरीदने में भी मदद करती है। संक्षेप में यह संस्था बैंक अधिकारियों को ग्रामीण गरीबों का मित्र बनाने और गरीबों को बैंक का सहभागी बनने की सीख देती है।

परिणामस्वरूप दोनों के बीच परस्पर सौहार्दपूर्ण संबंध होने के कारण ग्रामीणों को अधिकाधिक ऋण मिल रहा है जिसके सदुपयोग पर 'मर्यादा' की कड़ी नजर रहती है। 'मर्यादा' ने गांवों में 200 से अधिक संगठन बनाए हैं जिनमें करीब 4,500 सदस्य कार्यरत हैं। इन ग्रामीण इकाइयों में करीब छह दर्जन संगठन ऐसे हैं जो बैंकों के साथ तालमेल स्थापित रखने से तीसरे पक्ष के संपर्क में आ गए हैं। इन संगठनों की देखा-देखी आसपास के गांवों में भी वैसे ही संगठन बन रहे हैं जिनसे निर्धन परिवारों को गरीबी की रेखा से ऊपर उठाने और उन्हें स्वावलंबी बनाने की सरकारी योजनाओं की पूर्ति हो रही है। ❑

केन्द्र-राज्य संबंध

रामजी प्रसाद सिंह

आजकल कुछ जिम्मेदार राजनीतिक तत्वों द्वारा केन्द्र सरकार पर आरोप लगाया जा रहा है कि वह राज्यों का शोषण करती है, उनकी स्वायत्तता का अपहरण करती है तथा उन्हें अपना उपनिवेश समझती है। इसी क्रम में यह भी कहा जाता है कि राज्य सरकार को बर्खास्त करने से केन्द्र सरकार के अधिकार का दुरुपयोग होता है। इसलिए संविधान की धारा 356 को हटा दिया जाए।

स्मरणीय है कि धारा 356 का उपयोग कर अभी तक 106 राज्य सरकारों को बर्खास्त किया जा चुका है। इनमें अधिकांश राज्य सरकारों को राजनीतिक प्रतिशोध की भावना से बर्खास्त किया गया था।

संविधान-सभा में इस धारा का प्रावधान करने के समय, तत्कालीन विधि मंत्री श्री बी.आर. अम्बेडकर ने कहा था इस धारा का अत्यंत असाधारण स्थिति में उपयोग किया जाएगा। इसका प्रावधान इसीलिए किया जा रहा है कि ताकि कोई राज्य सरकार अगर संविधान का उल्लंघन करे तो केन्द्र असहाय की तरह देखता न रहे। डा. अम्बेडकर की धारणा थी कि शायद ही कोई राज्य सरकार संविधान का अतिक्रमण करेगी। इसलिए उन्होंने संविधान-सभा में कहा था कि शायद ही कभी इस धारा का उपयोग किए जाने की नौबत आएगी। किंतु डा. अम्बेडकर की यह धारणा निर्मूल साबित हुई। यह बात 50 वर्षों में इसके 106 बार उपयोग किए जाने से सिद्ध है। किंतु दुरुपयोग की संभावना के कारण क्या किसी उपयोगी कानून को रद्द कर दिया जाना चाहिए? आखिर कौन-सा ऐसा कानून है, जिसका दुरुपयोग नहीं हो सकता? अच्छे से अच्छे कानून का दुरुपयोग हो सकता है। अच्छी से अच्छी दवा का दुरुपयोग संभव है। आजकल सूचना के क्षेत्र में जो क्रांति हुई है और नाना प्रकार के संचार-यंत्र बने हैं, उनका आतंकवादी और अपराधकर्मी दुरुपयोग कर रहे हैं, तो क्या दूर-संचार संयंत्रों का विकास रोक दिया जाए?

राज्यों को एक उपनिवेश के रूप में उपयोग किए जाने की शिकायत करने वाले तत्वों को, वास्तव में देश के सांविधानिक विकास के बारे में या तो जानकारी नहीं है या जानबूझ कर उसकी गलत व्याख्या करते हैं।

सच यह है कि ब्रिटिश सरकार यहां से विदा होने से पहले, भारत को एक दुर्बल राष्ट्र बना कर जाना चाहती थी। इसीलिए ब्रिटेन ने यह सुझाव दिया था कि केन्द्र के पास केवल 'परराष्ट्र, प्रतिरक्षा और संचार' के विषय रहने चाहिए तथा शेष सारे अधिकार राज्यों को दिए जाने चाहिए। केन्द्र के पास वित्त व्यवस्था तक रखने का अधिकार देना भी, ब्रिटिश शासन को मंजूर नहीं था। मुस्लिम लीग इस पर सहमत हो गई थी क्योंकि उसे लगा कि इससे जिन राज्यों में उनका राज है, वे स्वतंत्र हो जाएंगे और पाकिस्तान की स्थापना का उसका सपना पूरा हो जाएगा। प्रारंभ में कांग्रेस भी इस पर सहमत थी ताकि देश का विभाजन न हो। किंतु बाद में कांग्रेस सावधान हो गई। उसने देश का विभाजन मंजूर कर लिया, लेकिन वित्तीय अधिकार-रहित केन्द्र अर्थात राज्यों के अनुदान पर निर्भर केन्द्र सरकार की स्थापना को स्वीकार नहीं किया।

स्वतंत्रता-प्राप्ति के बाद जब संविधान का निर्माण किया गया, तो राज्यों को यथापूर्व कायम रखा गया, किंतु राज्यों के पुनर्गठन का अपना अधिकार केन्द्र ने सुरक्षित कर लिया। इसमें नये राज्यों के निर्माण का केन्द्र का अधिकार भी कायम रहा। केन्द्र ने किसी राज्य की सीमा का विस्तार करने, किसी राज्य-विशेष की सीमा को दूसरे राज्य में मिलाने, उसकी सीमाओं में परिवर्तन करने या उसका नाम बदलने का भी अधिकार अपने पास सुरक्षित रखा।

इसी अधिकार का उपयोग कर केन्द्र सरकार ने राज्य पुनर्गठन आयोग की स्थापना की और 1956 में देश के प्राय: सभी राज्यों को उसकी रिपोर्ट के आलोक में, पुनर्गठित कर दिया। भारत का खंड-खंड करने के इरादे से ही अंग्रेजों ने सर्वसत्ता सम्पन्न राज्यों की योजना दी थी। इसी उद्देश्य से ब्रिटिश सरकार ने देशी रियासतों को भी आजाद कर दिया था, किंतु केन्द्र ने उन्हें भी देर-सवेर किसी-न-किसी राज्य में विलीन कर दिया। कई देशी रियासतों को मिलाकर एक राज्य बना दिया गया। हैदराबाद रियासत इसका प्रत्यक्ष प्रमाण है। अब वह आंध्र प्रदेश के नाम से जाना जाता है, उसमें मैसूर के भी कुछ भाग शामिल हैं। हैदराबाद अब केवल एक महानगर है।

राज्यों के निर्माण या पुनर्गठन के लिए संविधान में संशोधन करना जरूरी होता है। अन्य विषयों में संविधान में संशोधन के लिए यह जरूरी होता है कि संसद के दोनों सदनों में आधे से अधिक सदस्य उपस्थित हों और मतदान में भाग लें तथा मत देने वाले सदस्यों का दो-तिहाई उसके समर्थन में मतदान करे। किसी-किसी संविधान-संशोधन विधेयक को संसद द्वारा विधिवत पारित किए जाने के बाद, देश की आधी से अधिक विधान सभाओं की मंजूरी की जरूरत होती है किंतु राज्यों के पुनर्गठन के लिए ऐसा कोई बंधन नहीं है।

राज्यों के पुनर्गठन संबंधी विधेयक, साधरण विधेयक की तरह संसद में साधारण बहुमत के आधार पर पारित किए जा सकते हैं। इन पर न तो दो-तिहाई बहुमत जुटाने की जरूरत होती है, न इन पर आधे से अधिक विधान सभाओं की सहमति लेने की जरूरत होती है। इसके लिए मात्र यह जरूरी है कि विधेयकों का प्रारूप उस प्रदेश/राज्य की विधान सभा को विचार के लिए अवश्य भेजा जाए। यह जरूरी नहीं कि विधान सभा उस पर सहमत हो। राज्यों के पुनर्गठन का केन्द्र का अधिकार सर्वोपरि है। संसद चाहे तो विधान सभा की सिफारिश पर विचार करे या ठुकरा दे।

राज्यों के पुनर्गठन के केन्द्र के इस असाधारण अधिकार से स्पष्ट है कि राज्यों की स्वायत्तता सीमित है। हमारी संसद को राज्य के अधिकार-क्षेत्र में आने वाले विषयों को केन्द्र के लिए आरक्षित विषयों में शामिल करने अथवा समवर्ती सूची में शामिल करने का भी अधिकार है।

ऐसी अवस्था में राज्यों को स्वतंत्र समझने और केन्द्र द्वारा उनकी स्वायत्तता का अतिक्रमण किए जाने के आरोप सर्वथा निराधार हैं। सत्ता के दुरुपयोग की शिकायतें सही हो सकती हैं, किंतु उनके बहाने केन्द्र की सत्ता में कटौती के सुझाव का प्रस्ताव सर्वथा अनुचित हैं।

वास्तव में, भारत एक संघ है, किंतु इस संघ का निर्माण न तो सोवियत संघ की तरह हुआ, न ही संयुक्त राज्य अमरीका की तरह। भारतीय संघ का निर्माण संविधान ने किया है, न कि राज्यों ने। भारतीय संघ का निर्माण राज्यों के बीच किसी संधि के आधार पर नहीं हुआ। राज्यों का निर्माण संविधान-सभा ने किया और उसने उनके पुनर्गठन का अधिकार संसद के सुपुर्द किया।

अब यदि राज्यों का निर्माण अमरीका या सोवियत संघ के ढांचे के अनुसार किए जाने का प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से सुझाव आता है, तो उसका कोई औचित्य नहीं है। भारत जैसे विशाल देश की एकता और अखंडता की सुरक्षा के लिए जरूरी है कि केन्द्रीय सत्ता मजबूत हो, केन्द्र मजबूत हो, राज्य मनमानी न करें। राज्यों के शासक वर्ग संविधान का उल्लंघन न करें।

हमें यह स्वीकार करना होगा कि भारतीय संघ, न तो ब्रिटिश भारत का उत्तराधिकारी है और न ही मुगल साम्राज्य का। इसका सृजन भारतीय संविधान ने किया है। इसमें केन्द्र को सत्ता का केन्द्र बनाया गया है और राज्यों को इसके ग्रह-मंडल का सदस्य। इसका यह अर्थ नहीं कि राज्यों को गुलाम बनाया गया है। वास्तव में राज्यों की विधान सभाएं भी उसी जनता-जनार्दन द्वारा चुनी जाती हैं, जो संसद को चुनती है। अतएव, उसकी मर्यादा की भी रक्षा होनी चाहिए। यदि केन्द्र सरकार, किसी राज्य सरकार के लिए निर्धारित अधिकार-क्षेत्र का अतिक्रमण करती है, तो संविधान में उसका निदान निर्धारित कर दिया गया है।

राज्यों के अधिकार क्षेत्र के अतिक्रमण के विरुद्ध कोई भी नागरिक उच्च या उच्चतम न्यायालय का दरवाजा खटखटा सकता है। पहले न्यायालय, राज्यों में राष्ट्रपति शासन कायम करने के केन्द्र सरकार के फैसलों को राजनीतिक फैसला मानते थे और उसमें हस्तक्षेप करने से इन्कार करते थे किंतु अब ऐसी बात नहीं है। न्यायालय अब राजनीतिक विद्वेष की भावना से किसी राज्य में राष्ट्रपति शासन लागू किए जाने की संवैधानिकता पर विचार कर सकता है। बर्खास्त सरकार को फिर से बहाल कर सकता है। भंग विधानसभा को पुनर्जीवित कर सकता है। पड़ोसी देश पाकिस्तान और नेपाल के उच्चतम न्यायालय भी अपने इस अधिकार का इस्तेमाल कर चुके हैं। श्री एस.आर. बोम्मई के मामले में भारत के उच्चतम न्यायालय ने भी अपने इस अधिकार को सिद्ध किया है। साथ ही साथ, उसने संविधान की धारा 356 के दुरुपयोग को रोकने के लिए यह व्यवस्था दी है कि मुख्यमंत्रियों के बहुमत की परीक्षा साधारणतया विधानसभा में की जाए और विधानसभा को संसद की सहमति प्राप्त किए बगैर भंग न किया जाए। उच्चतम न्यायालय की इस व्यवस्था से धारा 356 के दुरुपयोग की संभावना काफी हद तक दूर हो गई है।

राष्ट्रपति श्री के.आर. नारायणन द्वारा दो बार राष्ट्रपति शासन लागू करने का प्रस्ताव वापस किए जाने के कारण धारा 356 के दुरुपयोग की संभावना और कम हुई है। इसलिए धारा 356 के विद्यमान होने से किसी खतरे की अशंका निर्मूल है।

केन्द्र के पास आपातकालीन स्थिति से निपटने के लिए भरपूर सांविधानिक अधिकार रहने चाहिए। उसके दुरुपयोग को देखने के लिए देश के न्यायालय सक्षम हैं। राष्ट्रपति जी सक्षम हैं। केन्द्र सरकार को समय-समय पर सचेत करने, परामर्श देने और उसकी सहायता करने के अपने अधिकार का उपयोग कर राष्ट्रपति केन्द्रीय मंत्रिमंडल पर लक्ष्मण-रेखा खींच सकते हैं। डा. राजेन्द्र प्रसाद, डा. सर्वपल्ली राधाकृष्णन, ज्ञानी जैल सिंह, श्री आर. वेंकटरामन और वर्तमान राष्ट्रपति ने इसका प्रचुर प्रदर्शन किया है। केन्द्र के पास उस राज्य सरकार को बर्खास्त करने का अधिकार सुरक्षित होना चाहिए, जो अपने नागरिकों को सुरक्षा देने में विफल हो।

जरूरी यह नहीं है कि संविधान की धारा 356 को हटाया जाए, बल्कि जरूरी यह है कि केन्द्र में मजबूत सरकार हो जिसे देश की एकता और अखंडता की रक्षा के लिए प्रचुर अधिकार हों। केन्द्र मजबूत होगा तो राज्यों की सुरक्षा होगी। इसके अभाव में केन्द्र सरकार राज्यों को आंतरिक अशांति और बाह्य आक्रमण से सुरक्षा देने के अपने कर्तव्य का पालन करने में विफल होगी। इसलिए केन्द्र के अधिकार पर लक्ष्मण-रेखा लगाने की मुहिम पर नागरिकों को अंकुश लगाना चाहिए। ❑

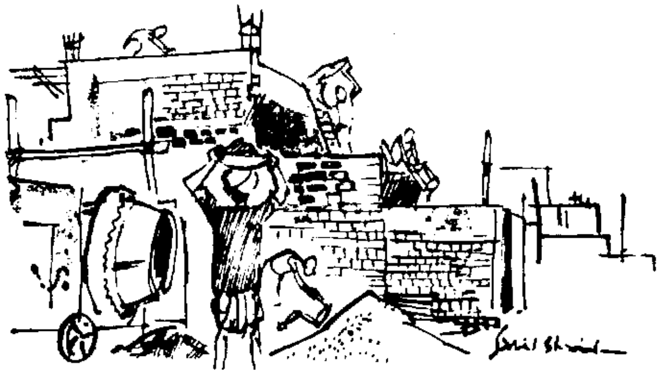

भूमिगत प्रसारण की प्रणेता :

उषा मेहता

आशारानी व्होरा

इस वर्ष राष्ट्रपति जी द्वारा 'पद्म विभूषण' जैसे बड़े राष्ट्रीय अलंकरण से सम्मानित डा. उषा मेहता एक सुप्रसिद्ध स्वतंत्रता-सेनानी और समर्पित समाज-सेविका हैं।

1942 के 'भारत छोड़ो' आंदोलन के दौरान मुंबई में 'भूमिगत रेडियो' के प्रसारण से उषा मेहता का नाम देश भर में चर्चित हुआ था। अंततः पकड़े जाने पर 'रेडियो षडयंत्र केस' में उन्हें चार साल की कड़ी कैद की सजा दी गई थी।

आजादी के बाद भी उषा मेहता ने विवाह न कर, अपना पूरा जीवन समाज-सेवा, शिक्षा और देश-निर्माण को समर्पित कर दिया। 'हिंदुस्तानी प्रचार सभा', 'गांधी स्मारक निधि', 'गांधी संग्रहालय', 'मातृ भाषा मंच', 'राष्ट्र भाषा महासंघ' आदि दर्जनों संस्थाओं से जुड़ी और कई समाजोपयोगी पुस्तकों की लेखिका वयोवृद्ध उषा जी 78 वर्ष की आयु में आज भी सक्रिय हैं।

'स्वतंत्रता के स्वर्ण जयंती वर्ष' के समापन के अवसर पर यह आलेख उनके सम्मान में प्रस्तुत है।

बीसवीं सदी के अंतिम काल में, आज जबकि लेखन और जन-सेवा के क्षेत्र में इलैक्ट्रानिक मीडिया का प्रवेश आम बात है, 1942 के 'भारत छोड़ो' आंदोलन के दौरान भूमिगत प्रसारण में 'पहल' करने वाला एक भूला-बिसरा, किंतु महत्वपूर्ण नाम है—उषा मेहता। भारत में दूरदर्शन के प्रवेश से पूर्व प्रिंट मीडिया से इतर रेडियो (आकाशवाणी नाम संभवतः बाद में दिया गया) ही जन-जन तक अपनी आवाज पहुंचाने का एक प्रभावी माध्यम था। सुश्री उषा मेहता ने भूमिगत रेडियो की स्थापना करके न केवल आंदोलन को गति व शक्ति प्रदान की बल्कि अल्पायु व अनुभवहीनता के बावजूद, अनेक जोखिम भरे कदम उठा कर अपने काम को सफलतापूर्वक सम्पन्न भी कर दिखाया। कैसे? यही रोमांचक कहानी यहां प्रस्तुत है:

उषा मेहता का जन्म 25 मार्च 1920 को सतारा में हुआ था। नौ वर्ष की नन्हीं बालिका उषा ने जब परी-कथाओं की किताबें और मनोरंजक खिलौने छोड़, बम, पिस्तौल के खिलौनों से खेलना शुरू किया तो सरकारी पद पर आसीन पिता चिंतित हुए। पर जब आस-पास से आजादी की लड़ाई और उसके लिए कुरबानी देने वाले किशोर-किशोरियों की खबरें आतीं तो उषा उत्तेजित हो उठती। गांधी जी ने जब महिलाओं और युवा वर्ग का आह्वान किया तो ग्यारह वर्षीय किशोरी उषा स्वतंत्रता-सेनानियों की अग्रिम पंक्ति में जा खड़ी हुई। पिता की चिंता और बढ़ी, पर दृढ़ कदम कभी रुकते हैं? वह धरनों, जलसों, जुलूसों में भाग लेने लगीं। एक जुलूस में शामिल हो, एक दिन के लिए जेल भी हो आईं।

इस समय तक उषा पर गांधी जी का प्रभाव ही प्रबल था। कालेज जाकर जब क्रांतिकारी साहित्य पढ़ा तो क्रांतिकारी विचारधारा के सहपाठियों से उषा जी की संगति बैठ गई। भीतर कुछ कर गुजरने की आकांक्षा जोर पकड़ ही रही थी कि 1942 का आंदोलन छिड़ गया और अवसर सामने आ गया। विल्सन कालेज सूरत से बी.ए. और बम्बई विश्वविद्यालय से एल.एल.बी. करके जैसे ही उन्होंने एम.ए. में प्रवेश लिया, कुछ दिन बाद आंदोलन छिड़ने पर वह कालेज की पढ़ाई छोड़, आंदोलन में कूद पड़ीं। इसके पूर्व भी वह अन्य कालेज-छात्राओं की तरह धरनों, जुलूसों में ही भाग ले रही थीं। पर इससे उन्हें संतोष न था। जेल जाते समय बापू 'करो या मरो' का जो नारा दे गए थे, वह उनके मन में निरंतर गूंजने लगा और वह कुछ हट कर, कुछ महत्वपूर्ण कार्य कर दिखाने की योजना बनाने लगीं।

जज पिता के समझाने-बुझाने, डांट-डपट करने का उन पर कोई असर नहीं हुआ और एक गुप्त रेडियो स्थापित करने का निर्णय सुना कर उन्होंने घर छोड़ दिया कि "ऐसे समय जब सारे बड़े नेता जेल में हैं, प्रेस पर सेंसर है, आजादी की आवाज दबा दी गई है, मैं जेल नहीं जाऊंगी। हर कोई जेल चला जाएगा तो आंदोलन कैसे चलेगा? मैं देशवासियों तक अपनी

और भूमिगत नेताओं की आवाज पहुंचाने के लिए एक गुप्त रेडियो जरूर चलाऊंगी, चाहे उसके लिए मुझे कुछ भी करना पड़े और कैसे भी कष्ट झेलने पड़ें!" न खतरों की परवाह की, न पढ़ाई छूटने की, न पिता की नौकरी चले जाने के भय को आड़े आने दिया। "पिताजी, मैं इसीलिए घर छोड़ कर जा रही हूं कि आप पर कोई आंच न आए। आगे जो हो!" और उषा मेहता मित्रों से सलाह-मशविरा करने और पैसे का प्रबंध करने के लिए चल दीं। स्वातंत्रता-संघर्ष का माहौल; विशेष रूप से 1942 के उग्र आंदोलन में उत्तेजना से भरा हुआ! उस पर उम्र का जुनून, कुछ कर गुजरने की तमन्ना और देश के लिए समर्पण! कौन किसकी सुनता था? कौन आगा-पीछा सोचता था? परिणाम चाहे जो हो, उस समय तो 'अर्जुन की आंख' केवल अपने लक्ष्य पर थी।

एक देशभक्त रिश्तेदार महिला से इस कार्य के लिए पैसा व आभूषण मिल गए। बाबूभाई प्रसाद नाम के एक क्रांतिकारी विश्वस्त साथी भी मदद के लिए आगे आए और अर्जुन की आंख मत्स्य-भेदन पर लग गई। ऐसा एक गुप्त ट्रांसमीटर विट्ठल भाई झावेरी ने भी लगाया। उधर डा. राम मनोहर लोहिया के साथी भी एक गुप्त रेडियो चला रहे थे। पर इन तीनों में से उषा मेहता और बाबूभाई प्रसाद का रेडियो अधिक सक्रिय हुआ। इसके अपने ट्रांसमीटिंग स्टेशन तथा रिकार्डिंग स्टेशन थे। अपने गुप्त संदेश थे। अपनी 'वेव लाइन' थी। सबसे बड़ी बात कि घर पर इतनी कश-म-कश के बाद और व्यवस्था (पैसे की व्यवस्था सहित) संबंधी कार्यों का समय मिला कर उषा मेहता के गुप्त रेडियो ने 14 अगस्त से अपना गुप्त प्रसारण आरंभ भी कर दिया। 9 अगस्त से तो आंदोलन प्रारंभ ही हुआ था! इतना बड़ा गुप्त कार्य और कुल 5 दिन में सारी तैयारी! उषा जी के उत्साह का अंदाज इसी से लगाया जा सकता है।

ऐसे समय, जब पूरी सरकारी मशीनरी गुप्त रेडियो की खोज के लिए सतर्क थी और आसपास लोगों की धर-पकड़ जारी थी, यह कोई आसान काम न था। खतरा भांपते हुए इन लोगों को हर पंद्रह दिन बाद जगह बदलनी पड़ती थी कि किसी को संदेह न हो। एक बार तो ये मकान मालिक द्वारा पकड़वाए जाने से बाल-बाल बचे। पर जोखिम तो उठाना ही था! यह उषा जी का रेडियो ही था, जो लगातार 'अंग्रेजों भारत छोड़ो' का नारा लगाता था और जिसने क्रांतिकारियों के बम-केस, जमशेदपुर की हड़ताल और चिमूर तथा आष्टी गांवों में महिलाओं के साथ बर्बर व्यवहार की खबरें सबसे पहले प्रसारित की थीं। कांग्रेस-संगठन की सूचनाएं भी यह रेडियो निरंतर देता था। डा. लोहिया और अरुणा आसफअली के संदेश और आह्वान भी यह स्वतंत्रता-संग्रामियों तक प्रायः पहुंचाता था। इसलिए सरकार की पैनी नजरें भी इस पर ज्यादा गड़ी थीं। इतनी सावधानी बरतने पर भी सरकार को इसकी भनक लग गई और 12 नवंबर की रात छापा मार कर यह गुप्त स्टेशन पकड़ लिया गया। स्टेशन की सारी सम्पत्ति जब्त कर ली गई। बाबूभाई और उषा, दोनों 'रेडियो षडयंत्र केस' में गिरफ्तार कर लिए गए। यह आशंका तो शुरू से ही थी, अतः मानसिक रूप से ये तैयार ही थे, एक संतोष लिए कि ऐसे संकट के समय देश के लिए कुछ कर सके। कुर्बानी का संतोष किसी भी जोखिम या कष्ट से ऊपर होता है। तभी तो ऐसे लोगों ने इतिहास बनाया!

पूछताछ के समय उषा जी को 'लाक-अप' में रखा गया। किसी भी युवती के लिए यह एक अत्यन्त कठिन समय होता है। पर छह महीने की लगातार पूछताछ में भी पुलिस उनसे कुछ नहीं उगलवा सकी। बड़ी निडरता से उन्होंने यातनाएं झेलीं। यहां आज के संदर्भ में यह उल्लेखनीय है कि बेंत मारना, भूखा रखना, धूप में खड़ा रखना, बर्फ की सिल्ली पर लिटाना आदि कैसी भी यातनाएं स्वतंत्रता-सेनानी, विशेष रूप से क्रांतिकारी युवतियों, को दी गई हों, पर उनके साथ अभद्र अश्लील व्यवहार नहीं होता था। जहां कहीं हुआ, उत्तेजित भीड़ द्वारा उसका जम कर बदला लिया गया, जनता ने दोषियों को बख्शा नहीं। आष्टी, चिमूर, मसूरिया जैसे उदाहरण इसकी पुष्टि करते हैं। जुल्मी अंग्रेज भी, उनकी पुलिस भी, इस मामले में कुछ नैतिकता बरतती थी; विशेष रूप से स्वतंत्रता सेनानी महिलाओं के बारे में वे धृष्टता करते डरते थे। तो 'लाक-अप' में लंबी पूछताछ का सामना उषा जी ने कैसे किया? यह स्वयं उनके मुंह से ही सुनना अच्छा लगेगा आपको, "भई हमें तो ठीक से मालूम ही न था कि क्या करना है, कैसे करना है? बस गांधी जी का 'करो या मरो' वाला वाक्य दिलो-दिमाग पर छाया था। इसलिए हमने भूमिगत रेडियो के खतरे तो उठाए ही, प्रासीक्यूटर द्वारा पूछताछ का सामना भी हमने कालेज-छात्रों की-सी शरारत शैली में किया। एकदम ढीठ बन कर। जब भी कुछ पूछा जाता, मैं चाकलेट चबाती हुई मुस्कुराती रहती या हो-हो करके हंसने लगती। यातनाओं के दौरान भी मैंने न निडरता छोड़ी, न अपनी हास्यप्रियता। तंग आकर पुलिस ने पूछताछ बंद कर दी। षडयंत्र की स्वीकृति पर ही केस बना कर हम पर मुकदमा चलाया गया और चार साल की कड़ी कैद की सजा सुना दी गई। इसके लिए हम तैयार ही थे। मंजिल हमने खुद चुनी थी तो परिणाम भी हमें ही भुगतना था। कुछ समय बाद आजादी मिली। हमें संतोष मिला कि प्रयत्न व्यर्थ नहीं गया, जीवन व्यर्थ नहीं गंवाया।"

अप्रैल, 1946 में रिहा होने के बाद सुश्री उषा मेहता ने अपना छूटा अध्ययन आगे बढ़ाया। एम.ए. किया। 'महात्मा गांधी की सामाजिक और राजनीतिक विचारधारा' पर शोध कार्य करके 1953 में 'डाक्टरेट' की उपाधि प्राप्त की। बम्बई विश्वविद्यालय में राजनीति शास्त्र की लेक्चरर हुईं और सार्वजनिक क्षेत्र में निरंतर कार्यरत रहीं। वह कांग्रेस समाजवादी पार्टी की एक प्रमुख सदस्या के रूप में ख्यात रहीं, पर एक स्वतंत्रता-सेनानी के नाते अपने लिए कोई अतिरिक्त सुविधा नहीं चाही। संभवतः इसी कारण एक निर्भीक वक्ता के रूप में अपनी छवि बना पाईं और उसे बरकरार भी रख सकीं। देश-सेवा के लिए पूर्ण समर्पित होने से उन्होंने विवाह भी नहीं किया। समय-समय पर देश की वर्तमान स्थिति पर प्रकट उनके विचारों से सभी परिचित हैं। कुछ बानगियां इस प्रकार है:

'धर्मनिरपेक्षता की मनमानी परिभाषा से मुझे सख्त शिकायत है।'... 'जब सभी अपनी झोलियां भरने में व्यस्त हैं, सरकारें बदलने से भी क्या होने वाला है।'... 'चुनाव प्रणाली दोषपूर्ण है। व्यवस्था बदलने के लिए पहले इसे बदलें। फिर संविधान बदलने (जरूरी संशोधन करके) पर भी विचार होना चाहिए।'... 'औद्योगिक, वैज्ञानिक प्रगति हुई है, पर गांधी

जी का सपना साकार नहीं हुआ। उन्होंने मूल्यों की उपासना पर जोर दिया था, यहां उनका अवमूल्यन ही हो रहा है।'... 'यह वह आजादी नहीं है, जिसके लिए हमने अपनी जानों को जोखिम में डाल कर, व्यापक पैमाने पर कुरबानियां देते हुए, लड़ाई लड़ी थी।'... 'मानवीय अधिकारों के लिए अपनी सरकार से भी लड़ना पड़े तो लड़ना चाहिए।' और 1975 में आपातकाल घोषित होने पर उन्होंने अपनी सरकार से लड़ कर दिखा दिया था। स्वयं भूमिगत हो गईं थीं और प्रेस की स्वतंत्रता के लिए जोरदार अभियान चलाने लगी थीं। उनकी पहल से उन दिनों भूमिगत आंदोलन कई जगह चले और सफल हुए। इसके अलावा, उन्होंने राजनैतिक कैदियों के परिवारों की सहायता के लिए फंड-एकत्रण अभियान भी चलाया था। उनके द्वारा वितरित भूमिगत परचों में जो सूचनाएं होती थीं, आंदोलनकारियों की अकारण धर-पकड़ और विदेशी अखबारों की रपटें आदि से जो हवा बनी (उधर बिहार में स्व. जयप्रकाश नारायण भी ऐसी हवा बना रहे थे), उसी से आपातकाल का अंत हो सका।

राष्ट्रीय मुद्दों पर उषा मेहता समय-समय पर अपने विचार विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं के माध्यम से प्रकट करती रही हैं। वह अंग्रेजी, गुजराती, हिंदी—तीनों भाषाओं में अधिकारपूर्वक लिखती-बोलती हैं। महाराष्ट्र में रहने के कारण मराठी को भी वह अपनी मातृभाषा मानती हैं और राष्ट्रभाषा हिंदी से उन्हें गहरा लगाव है। इतना कि इधर उन्होंने मुंबई की सभी हिंदीभाषी संस्थाओं का एक महासंघ ही बना डाला है, जिसकी वह अध्यक्ष हैं।

मुंबई विश्वविद्यालय और एस.एन.डी.टी. महिला विश्वविद्यालय में अध्यापन कर, पदोन्नति प्राप्त करते हुए, वह राजनीति व नागरिक प्रशासन विभाग की विभागाध्यक्ष और प्रोफेसर पद तक पहुंचीं। उनका नाम कई प्रसिद्ध संस्थाओं से जुड़ा है। जैसे—अध्यक्ष, मणि भवन, गांधी संग्रहालय; गांधी स्मारक निधि; मातृ भाषा मंच; स्वतंत्रता-सेनानी सभा, मुंबई; एशियन बुक ट्रस्ट आदि। सदस्य, इंडियन इन्स्टीट्यूट आफ एडवान्स्ड स्टडी, चयन समिति बजाज पुरस्कार की तरह अनेक सरकारी, गैर-सरकारी सलाहकार समितियों, न्यासों, विश्वविद्यालयीन समितियों की सदस्यता के अलावा, वह विश्वविद्यालय अनुदान आयोग की सदस्य भी रहीं।

एक निर्भीक लेखिका और समर्पित समाज-सेवी होने के नाते उन्होंने कई समाजोपयोगी पुस्तकें भी लिखी हैं। राजनीति और सामाजिक विषयों पर उनके द्वारा अकेले और सहकर्मी लेखकों के साथ मिल कर लिखी गईं कुछ प्रमुख पुस्तकें व पुस्तिकाएं हैं:

1. जनतंत्र क्यों?
2. राजनैतिक दल क्यों?
3. भारत में राष्ट्रपति के कार्य
4. सर्वोदय के सामाजिक-राजनीतिक विचार
5. महिला-मुक्ति में गांधी जी का योगदान
6. अमर शहीद (दो भाग)
7. विश्व की महान विभूतियां
8. विश्व की कालजयी महिलाएं
9. कौटिल्य और उनका अर्थशास्त्र (सह लेखक—उषा ठक्कर)
10. बंबई में कांग्रेस शासन (सह लेखक—ए. दस्तूर)
11. सरकार और शासित (सह लेखक—सी.एच. वकील)
12. एसेज आन इंडियन फेडरेशन (सह लेखक—एस.पी. अय्यर)
13. वूमेन एंड मेन वोटर्स, 77-80 के अनुभव (सह लेखक—बिलिमोरिया और उषा ठक्कर)
14. भारत और विदेश में स्वास्थ्य बीमा-योजना (सह लेखक—ए.डी. मारदे)

इनके अलावा, गांधी जी, स्वतंत्रता-संग्राम और महिला-समस्याओं पर उनके सौ से अधिक आलेख प्रकाशित हुए हैं। कुछ व्याख्यान-संग्रह और यात्रा-संस्मरण भी। विश्वविद्यालयीन व बाहर की पत्रिकाओं में वह निरंतर लिखती रही हैं। समाजवादी विचारधारा और राजनीतिक विषयों की विशेषज्ञ होने के नाते उन्होंने कई शोध-परियोजनाएं भी समय-समय पर चलाई हैं, जिनका लाभ सार्वजनिक रूप से उठाया गया जैसे चुनाव के मौके पर 'महिलाएं और चुनाव' विषय पर। वास्तव में स्वतंत्रता-सेनानी वही लिखते-बोलते रहे, जिसे उन्होंने जिया भी और जिसके लिए उन्होंने संघर्ष भी किया। संभवत: आने वाला समय ही इस लेखन का मूल्यांकन करेगा। अभी तो मूल्य-विध्वंस में बहुत कुछ दल-दल में दब-खो गया है।

देश के लिए उषा मेहता आजीवन समर्पित रहीं। इसके लिए उन्होंने विवाह भी नहीं किया। वृद्धावस्था में भी शक्ति-भर समाज-निर्माण के लिए प्रयासरत हैं। वर्तमान विखंडन व मूल्यहीनता की स्थिति से वह क्षुब्ध हैं, निराश नहीं, उनके हृदय में दबी चिनगारी समय-समय पर ज्वाला के रूप में भड़क उठती है। तब कोई बड़े से बड़ा नेता भी उनके कोप-बाणों से बच नहीं पाता। पर वह जो कुछ कहती हैं, उसे ध्यान से सुना और सराहा जाता है। एक समर्पित स्वतंत्रता-सेनानी के रूप में उनका नाम जैसे पूरे देश में चर्चित हुआ, इतिहास में उसे जगह मिली, उसी तरह स्वतंत्रता के बाद समाज-निर्माण में भी उनकी भूमिका को राष्ट्रीय ख्याति मिली है। सर्वत्र उनका सम्मान किया जाता है। उनकी आवाज सुनी जाती है। "यह हमारी आजादी की दूसरी लड़ाई है, जो हमें लड़नी ही है।" और उम्र, स्वास्थ्य की शिथिलता के बावजूद उनकी यह लड़ाई जारी है। एक उदाहरण :

14 सितंबर 1997 को मुंबई में उनकी संस्था 'हिंदुस्तानी प्रचार सभा' के परिसर में उषा जी की अध्यक्षता में राष्ट्रभाषा हिंदी को उसका न्यायोचित स्थान दिलाने के लिए एक बड़ी सभा जुटी, जिसमें लक्ष्य-प्राप्ति के लिए

(शेष पृष्ठ 26 पर)

प्रतियोगी परीक्षाओं में बैठने वालों के लिए उपयोगी पत्रिका

योजना

- आर्थिक एवं सामाजिक विषयों की मासिक पत्रिका

योजना में आप पाएंगे :

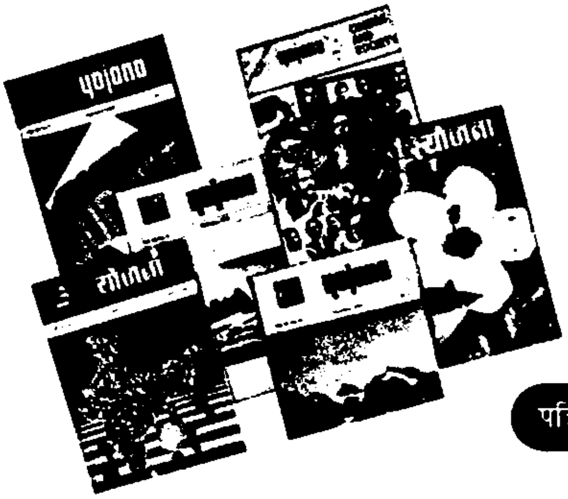

- अर्थव्यवस्था के विभिन्न पहलुओं पर ज्ञानवर्धक सामग्री विकास तथा योजना प्रक्रिया का गहन एवं विस्तृत विश्लेषण
- पर्यावरण, साक्षरता, विज्ञान एवं टेक्नोलौजी और पर्यटन जैसे आर्थिक-सामाजिक विषयों पर विशेषज्ञों द्वारा लिखित सारगर्भित लेख
- विभिन्न विकास योजनाओं की जानकारी

पत्रिका आज ही खरीदिए अथवा नियमित ग्राहक बनिए

योजना की विषय सामग्री का चयन प्रतियोगी परीक्षाओं में बैठने वाले युवाओं की आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर किया जाता है जो उनकी सफलता में सहायक हो सकती है।

(*योजना* अंग्रेजी, उर्दू, असमिया, बंगला, गुजराती, कन्नड़, मराठी, मलयालम, उड़िया, पंजाबी, तेलुगु और तमिल में भी निकलती है)

मूल्य : एक प्रति 5/- रु.

चंदे की दरें : ☐ एक वर्ष : 50 रु. ☐ दो वर्ष : 95 रु.
☐ तीन वर्ष : 135 रु.

मनीआर्डर/डिमांड ड्राफ्ट/ पोस्टल आर्डर निम्न पते पर भेजें :

सहायक व्यापार व्यवस्थापक (प्रसार)
पूर्वी ब्लाक-4, लेवल-7, रामकृष्णपुरम, नई दिल्ली-110066
दूरभाष : 6105590

विक्रय केन्द्र ● प्रकाशन विभाग

☐ पटियाला हाउस, तिलक मार्ग, नई दिल्ली-110001 ☐ सुपर बाजार (दूसरी मंजिल), कनाट सर्कस, नई दिल्ली-110001 ☐ हाल नं. 196, पुराना सचिवालय, दिल्ली-110054 ☐ कामर्स हाउस, करीम भाई रोड, बालार्ड पायर, मुंबई-400038 ☐ 8-एस्प्लेनेड ईस्ट, कलकत्ता-700069 ☐ राजाजी भवन, बेसेंट नगर, चेन्नई-600009 ☐ बिहार राज्य सहकारी बैंक बिल्डिंग, अशोक राजपथ, पटना-800004 ☐ प्रेस रोड, तिरुअनंतपुरम-695001 ☐ 27/6, राममोहन राय मार्ग, लखनऊ-226019 ☐ राज्य पुरातत्वीय संग्रहालय बिल्डिंग, पब्लिक गार्डन्स, हैदराबाद-500001 ☐ प्रथम तल, 'एफ' विंग, केंद्रीय सदन, कोरामंगला, बंगलौर-560034

विक्रय केंद्र ● पत्र सूचना कार्यालय

☐ सी.जी.ओ. काम्पलैक्स, 'ए' विंग, ए.बी. रोड, इंदौर (म.प्र.) ☐ 80, मालवीय नगर, भोपाल-462003 ☐ के-21, नन्द निकेतन, मालवीय मार्ग, 'सी' स्कीम, जयपुर-302001

गुम हो रही है गांव की गरिमा

अंकुश्री

हवा हर जगह चलती है। भोर भी सभी जगह होता है। चिड़ियों की चहचहाहट भी कमोवेश गांव-शहर हर जगह है। लेकिन जो मोहकता और मादकता गांव की सुबह में है, वह शहर में दुर्लभ है। गांव की सुहावनी शाम की तुलना शहर के गमला बाग या कैक्टस गार्डन से हरगिज संभव नहीं है।

बैलों के गले से आती घंटी की आवाज, रेहट से गिरते पानी की आती आवाज शहनाई को भी मात देती है। हरे-हरे खेतों से होकर गुजरती पतली-संकरी पगडंडियां, चक्की पर आटा पीसती महिलाओं का मधुर समूह गान, शाम होते अंधेरे को बुलाने का प्रयास करता चूल्हे से निकला धुंआ, एक साथ इतनी बातें देखने-सुनने को यदि मिल सकती हैं तो वह गांव ही हो सकता है। दिल खोल कर मिलना और जो कुछ भी हो, गरीबी या अमीरी, दुख या सुख को एक साथ परोस देने की सहजता गांव में ही मिल सकती है। यदि कहा जाए कि सहजता ही गांव की पहचान है तो गलत नहीं होगा।

लेकिन आज के गांव की स्थिति बदल रही है। गांव, गांव नहीं रह कर शहर के नजदीक पहुंचता जा रहा है। बाग-बगीचे, सब्जी-फल, कोल्हू-बैल सबका रूप गांव में सिमटता जा रहा है। गांव अपनी गरिमा खो रहा है।

गांव में पशुपालन का जो रूप था, वह बदल गया है। गाय-बकरियां पाल कर लोग दूध-दही के लिए स्वावलंबी रहा करते थे। गाय से दूध ही नहीं, गोबर और बछड़ा भी मिलता था। दूध पीने, गोबर जलाने और खेत में डालने तथा बछड़ा खेती में काम आता था। मगर अब बात बदल गई है। अब गांव में गाएं कम दिखती हैं। बकरियां भी उतनी नहीं रहीं। गाय पालन या पशुपालन में लोगों की रुचि कम हो गई है। मुर्गी पालन या सूअर पालन का जो आधुनिक प्रचलन हुआ है, वह गांव में कम, शहर में अधिक देखा जाता है। इसका परिणाम हुआ है कि गाय, गोबर और बैल के अभाव ने गांव की गरिमा को झकझोर कर रख दिया है।

हमारे देश में पांच लाख से ज्यादा गांव हैं। लेकिन इनमें से पांच प्रतिशत गांवों की भी गरिमा नहीं बच पाई है। गांव शहर की ओर भाग रहा है। लेकिन शहर की ओर भागता हुआ गांव, न गांव रह पाया है और न शहर बन सका है। गांव के लोग शहरी तामझाम की चपेट में आ गए हैं। मगर उनके पास शहर की भांति आजीविका का कोई सुदृढ़ साधन नहीं होने से वे अपना शौक पूरा नहीं कर पाते। यहीं से शुरू होता है—आत्मविश्वास का हनन और दिशाहीनता का प्रभाव। परिणामस्वरूप गांव में भी शहरों की तरह अपराध होने लगे हैं।

युवा पीढ़ी से देश को एक नई दिशाबोध की उम्मीद रहती है। मगर गांव के युवाओं के पास कोई काम या कार्यक्रम नहीं होने से वे गांव को ही अपराधस्थली बनाने में लगे हैं। इससे युवाओं का भविष्य और परिणामत: गांव का भविष्य भी अंधकारमय हो रहा है।

गांव में शिक्षा का अभाव है, विद्यालयों की संख्या की कमी नहीं है। फाइलों में तो और भी अधिक विद्यालय चल रहे हैं। मगर गांव के विद्यालयों की स्थिति बद से बदतर होती जा रही है। अधिकतर विद्यालय भवनों की स्थिति इतनी जर्जर है कि वे कब गिर कर अपने नीचे बीस-तीस-चालीस छात्रों को दबा लेंगे—कहना मुश्किल है। कागज पर चलने वाले विद्यालयों की तरह पेड़ के नीचे चलने वाले विद्यालयों की भी कमी नहीं है। गांव में शिक्षकों का मुख्य पेशा विद्यालय में शिक्षण नहीं रह गया है। वे अपनी खेती, मुकदमेबाजी या अन्य पेशों में अधिक जोर-शोर से लगे होते हैं।

साफ-सुथरा पानी स्वस्थ रहने के लिए बहुत जरूरी होता है। मगर गांव में न पीने के लिए और न नहाने के लिए ही साफ-सुथरे पानी की व्यवस्था है। पुराने कुंएं और पुराने पड़ गए हैं। नए कुंएं या तो बनते नहीं या बनने से पहले ही टूट जाते हैं। तालाबों का पानी बुरी तरह प्रदूषित हो गया है। गंदा पानी पी-पीकर लोग बीमार हो जाते हैं।

बीमारी से निपटने और स्वस्थ रहने की कोई सुदृढ़ व्यवस्था गांव में नहीं है। विकास प्रखंडों के अधीन कुछ स्वास्थ्य कर्मचारी कार्यरत अवश्य होते हैं, मगर उनका अधिक समय अपने घरों पर ही बीतता है। सप्ताह में एक दिन केंद्र पर जाकर वे दवा भर उठा लेते हैं, जिससे बेच-बेच कर वे अपना आर्थिक उपचार भी कर लेते हैं, मगर गांव वालों की बीमारी का कोई उपचार नहीं हो पाता। छोटी-बड़ी बीमारी को लेकर लोग गांव में ही कुहक-कुहक कर मर जाने के लिए मजबूर हैं।

यातायात की भी कोई समुचित व्यवस्था नहीं है। अपवाद के कुछ गांव इस मामले में भले ही भाग्यशाली हों मगर आमतौर पर गांव में सड़कों और नालियों का कोई इंतजाम नहीं होता। इससे लोगों को चलने में, रहने में कठिनाई होती ही है, समय भी बेकार होता है और गंदगी के कारण उत्पन्न कीटाणुओं-जीवाणुओं के चलते उन्हें और अधिक बीमारियों से जूझना पड़ता है।

शहर गंदगी का और गांव स्वच्छता का प्रतीक माना जाता था। शहर के लोग छुट्टियों में स्वास्थ्य-लाभ के लिए गांव जाया करते थे। मगर अब यह बात गांवों में नहीं रही। गांवों की स्वच्छता में बहुत कमी आ गई है। अब गांव भी गंदगी का जमाव बनते जा रहे हैं तथा पर्यावरण में प्रदूषण फैलाने में अपना योगदान देने लगे हैं।

सड़क किनारे बसे गांवों की एक विशेष पहचान, जो आज दिखाई दे रही है, वह है शौच की भरमार और शौचालयों का अभाव। सुबह-सुबह, लोग गांव की सड़कों के किनारे पंक्तिबद्ध होकर शौच-त्याग के लिए बैठे मिलते हैं। छोटे बच्चे भी इधर-उधर शौच कर देते हैं। इससे गांव में बहुत अधिक गंदगी फैली रहती है।

लोगों द्वारा शौच के लिए सड़क-किनारे जाने का एकमात्र मुख्य कारण है—गांव में पेड़-पौधों और झाड़ियों का अभाव। पहले लोग अपनी आवश्यकतानुसार घरों के आसपास या बाग-बगीचे में पेड़-पौधे लगाया करते थे। लेकिन अब यह परंपरा टूटती जा रही है, जलावन हो या दातौन, पत्ती हो या चारा, गांव वाले भी उन्हें अपने से उगा पाने में अपने को अक्षम महसूस करने लगे हैं और बाजार से इन्हें प्राप्त करते हैं।

पहले गांव में न्याय पंचायत व्यवस्था कारगर थी, जिसका आज अभाव हो गया है। इससे गांव वालों को आपसी छोटे-बड़े हर प्रकार के विवाद के लिए शहर भागना पड़ता है। बेरोजगारी और अराजकता के कारण गांव में बढ़ते अपराधों के चलते लोग मुकदमेबाजी में अधिक फंसने लगे हैं। मुकदमेबाजी की मार से दबा इंसान आज के गांव की पहचान-सा बन गया है। मुकदमेबाजी के लिए लोग शहर क्या दौड़ते हैं, गांव का टूटन हो जाता है। यदि गांव में शहर की सबसे बड़ी आवश्यकता महसूस होने का कोई एक कारण ढूंढा जाए तो वह है मुकदमेबाजी। गांव में सैंकड़ों बुजुर्ग ऐसे होंगे, जिन्होंने शहर का मुंह सिर्फ मुकदमेबाजी के लिए ही देखा होगा। बच्चों की पढ़ाई और नौकरी के लिए भी लोग शहर जाते हैं। मगर उनकी एक सीमा होती है। लेकिन मुकदमेबाजी के लिए शहर जाने वालों का अंत नहीं है।

विकास योजनाओं के सही क्रियान्वयन के अभाव के कारण भी गांव की गरिमा गुम हुई है। जिले के लिए प्राप्त विकास राशि का उपयोग मुख्य रूप से उस जिले के शहरों के लिए कर लिया जाता है। भले ही ग्रामीण विकास के लिए कुछ राशि अलग से आबंटित ही क्यों न हो। आंकड़ेबाजी के जाल में यदि नहीं फंसा जाए तो यह बात स्पष्ट हो जाएगी कि प्राप्त राशि से गांव का विकास कम हुआ है, उसका नुकसान अधिक हुआ है। नुकसान का सबसे बड़ा प्रमाण है परावलंबी बनने की आदतों का विकास। गांव वालों में विगत तीन-चार दशकों में ऐसी आदतें विशेष तौर पर विकसित हुई हैं। ❑

(पृष्ठ 23 का शेष) **भूमिगत प्रसारण की प्रणेता : उषा मेहता**

आह्वान किया गया। इस अवसर पर मुंबई की कुल 14 हिंदी-सेवी संस्थाओं ने मिल कर एक 'राष्ट्र भाषा महासंघ' का विधिवत गठन किया। उषा जी गुजराती भाषी हैं। अपना अधिकांश लेखन उन्होंने गुजराती और अंग्रेजी में किया है। इसके बावजूद राष्ट्र भाषा के पद पर वह हिंदी को ही देखना चाहती हैं और इसके लिए संघर्षरत हैं। इसलिए इस महासंघ का अध्यक्ष भी उन्हें ही चुना गया। आठ-सूत्री मांग-पत्र प्रस्तुत कर उसे पास करवाया गया और केंद्र व राज्य सरकारों के पास भेजने के साथ, सारे देश की हिंदी संस्थाओं को इस आंदोलन के साथ जोड़ने का निर्णय लिया गया। इससे डा. उषा मेहता की निष्ठा व सक्रियता का सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है। क्या नई पीढ़ी की युवतियां इस वयोवृद्ध स्वतंत्रता-सेनानी और समाज-सेविका से कुछ प्रेरणा लेंगी?

उषा मेहता की महती सेवाओं को देखते हुए उन्हें स्वतंत्रता-सेनानी 'ताम्रपत्र' के अलावा भी अनेक पुरस्कारों-सम्मानों से सम्मानित किया गया है। जनवरी 1998 के गणतंत्र दिवस पर उन्हें 'पद्म विभूषण' जैसे बड़े राष्ट्रीय अलंकरण प्रदान किए जाने की घोषणा की गई थी, जिसे 12 अप्रैल 1998 को राष्ट्रपति जी द्वारा उन्हें नई दिल्ली में प्रदान किया गया। पर उनका काम सभी पुरस्कारों से बड़ा है और उनके लिए जनता का प्यार व सम्मान उन्हें सभी पुरस्कारों-सम्मानों से ऊपर लगता है। ❑

दो रास्ते

संतोष कुमार 'राणा'

अभी सुबह के चार ही बजे थे कि रधिया उठ गई और घर में झाड़ू लगाने लगी। झाड़ू की आवाज सुनकर रधिया के पति हरिया की भी नींद खुल गई। वह हैरान था कि उसकी पत्नी रधिया आज अचानक इतनी सुबह उठ कर घर के कामों में जुट गई है, वह तो छह बजे से पहले उठती नहीं थी। परंतु उसे धीरे-धीरे रात को अपने दोनों के बीच हुए झगड़े का यह परिणाम नजर आने लगा। दोनों चुप थे, वैसे रात का कोई जूठा बर्तन भी नहीं था, केवल झाड़ू लगाना और घर गोबर से लीपना था। रात के झगड़े के कारण घर में खाना नहीं बना था। दोनों मुंह फेरकर सो गए थे, हरिया खाट पर और रधिया नीचे ही अपने एकमात्र दो-वर्षीय बच्चे को लेकर चटाई पर सो गई थी। रधिया काम भी कर रही थी और बीती हुई घटना को याद भी कर रही थी कि कैसे उसका स्वर्ग जैसा घर नर्क बन गया। वह सोचते हुए कुछ वर्ष पीछे चली गई थी जब उसका हरिया के साथ विवाह हुआ था, तब जिंदगी को जैसे पंख लग गए हों, दोनों के बीच अथाह प्रेम था। हरिया वन विभाग में अस्थायी वन श्रमिक के रूप में कार्य करता था, उसके मेहनती स्वभाव से सभी खुश रहते थे। छोटे क्लर्क से लेकर बड़े अधिकारी तक सभी उसे आश्वासन देते रहते थे कि तुम्हें जल्दी ही स्थायी वन श्रमिक के रूप में नौकरी मिल जाएगी। जिंदगी बहुत अच्छी तरह से कट रही थी।

हरिया अपनी पत्नी रधिया को बहुत चाहता था। वह जब दूसरी औरतों को अच्छे-अच्छे गहनों और कपड़ों में देखता, तब उसकी चाहत होती कि उसकी रधिया भी सुंदर-सुंदर कपड़े और गहने पहने। दूसरी तरफ रधिया सीधी-सादी, प्रकृति प्रेमी, केवल अपने पति के विशुद्ध प्रेम की चाहत रखती थी। उसे लटके-झटके पसंद नहीं थे। प्रकृति प्रेमी होने के नाते वह पहाड़ पर हो रही अंधाधुंध वन कटाई को देखकर चिंतित रहती थी। वह पढ़ी-लिखी न सही, परंतु वनों के महत्व के बारे में बखूबी परिचित थी। वनों की कमी से पहाड़ संकटग्रस्त हो गए थे, वहां का एकाकीपन नष्ट हो रहा था—ऐसा रधिया सोचती थी।

इधर झगड़ा हरिया से इस कारण से हो रहा था क्योंकि हरिया उसे खुश करने के चक्कर में वन अधिकारियों और वन ठेकेदारों के गलत आदेश मानने लगा था। साथ ही अन्य साथियों को भी इसके लिए प्रोत्साहित करने लगा था। यह रधिया को नागवार था। वह हरिया को ठेकेदारों तथा वन अधिकारियों के लुटेरे गिरोह में शामिल होने से मना कर रही थी। इसी बात को लेकर रात को दोनों में झगड़ा हुआ था। रधिया बोली थी, "तुम अगर मुझे खुश रखना चाहते हो, तो मुझे साड़ी-गहने-रुपये नहीं चाहिए, केवल तुम्हारा प्यार चाहिए। तुम उन लोगों का साथ छोड़ दो, जो वन तथा वनवासियों के दुश्मन हैं और ऐसे व्यक्ति का साथ दो जो वन तथा वनवासियों के दोस्त हैं। अगर तुम ऐसा नहीं करोगे तो मैं तुम्हारा साथ नहीं दूंगी..."

रधिया अब वर्तमान में लौट आई थी, क्योंकि उन दोनों का एकमात्र पुत्र जाग चुका था। गुस्से के मारे रधिया ने उसे भी पीटकर भूखे ही सुला दिया था। अब वह जल्दी से तैयार होकर अपनी डोलची में थोड़ा-सा सत्तु तथा दो-चार कपड़े लेकर पैदल ही मायके की ओर चल पड़ी। हरिया उसे रोकने की हिम्मत न जुटा सका, परंतु जल्द ही वह भी कपड़े पहन कर लगभग दौड़ते हुए उसके संग हो चला। दोनों देर तक चलते रहे, दोनों में बातचीत बंद थी, परंतु साथ-साथ चल रहे थे। हरिया का धीरज टूट रहा था। उसने ही पहले बोल कर चुप्पी तोड़ी—"देखो रधिया, इस तरह घर छोड़ कर जाते हैं क्या?"

रधिया तुनक कर बोली, "क्यों न जाऊं, तुमने घर रहने के लिए छोड़ा है क्या? मेरे विचारों के विपरीत तुम काम करके, क्या मुझे खुश रख सकते हो?"

हरिया बोला, "रधिया, तुम तो जानती हो कि मैं तुम्हें कितना चाहता हूं। तुम भी औरों की तरह अच्छा पहनो, खाओ, इसके लिए पैसा चाहिए कि नहीं?"

रधिया बोली, "परंतु पैसे की खातिर अपने ही हाथों अपने भविष्य को बर्बाद कर रहे हो। वनों की गैर-कानूनी कटाई में सहयोग कर रहे हो। हमारे बच्चे कहां रहेंगे? क्या खाएंगे? उनका भविष्य क्यों बर्बाद कर रहे हो? वन के बिना हम वनवासी मर जाएंगे..."

रधिया की बात हरिया को समझ में आ रही थी। वह समझ गया कि रधिया ठीक कह रही

(शेष पृष्ठ 29 पर)

संपूर्ण विश्व भौगोलिक दृष्टि से भिन्न-भिन्न स्वरूप में अवस्थित है जिसमें पर्वत, पठार, मैदान, मरुस्थल और सागर-महासागर मुख्य हैं। इन्हीं में से मरुस्थल एक परिस्थिति की दृष्टि से प्रतिकूल भू-भाग होते हैं। जलवायु की दृष्टि से मरुस्थल वह भू-भाग है, जहां औसत वार्षिक वर्षा 25 से.मी. से कम होती है तथा उच्च तापक्रम, अत्यधिक शुष्कता, उच्च वायुवेग और निम्न सापेक्षिक आर्द्रता होती है। जिसमें भौतिक और प्राकृतिक कारकों का योग अत्यधिक प्रतिकूल होता है। इसके फलस्वरूप जीव-जंतु और वनस्पति का आवरण विरल पाया जाता है।

वस्तुत: मरुस्थल शब्द अरबी भाषा के 'सखरा' शब्द का अनुवाद है, इसे 'सहारा' शब्द से भी परिभाषित किया जाता है जिसका तात्पर्य मरुस्थलों के एक संयुक्त समूह से है। ये पृथ्वी के समस्त मरु प्रदेशों के आधे से अधिक भाग पर फैले हुए हैं। मरुस्थलों की प्रकृति और मरुस्थलीकरण के कारणों के अध्ययन के लिए नैरोबी में 1977 में संयुक्त राष्ट्र संघ के तत्वावधान में एक संगोष्ठी आयोजित की गई। इस संगोष्ठी में मरुस्थलीय प्रदेशों के 1977 में तैयार किए गए विश्व मानचित्र के अनुसार आस्ट्रेलिया महाद्वीप के 75 प्रतिशत, अफ्रीका के 34 प्रतिशत, एशिया के 31 प्रतिशत, उत्तरी व दक्षिणी अमरीका के 19 प्रतिशत तथा यूरोप महाद्वीप के दो प्रतिशत भाग पर मरुस्थलों का प्रसार है। विश्व में प्रतिवर्ष आधे ब्रिटेन के बराबर क्षेत्र रेगिस्तान में बदल जाता है जिससे 90 करोड़ लोगों के समक्ष खाद्यान्न का खतरा उत्पन्न हो गया है। विश्व के लगभग 70 प्रतिशत मरुस्थल एशिया और अफ्रीका महाद्वीप में हैं। ये सभी मरुस्थलीय देश विकासशील या अविकसित हैं, जिनकी अधिकांश आबादी गरीब है। यहां के पर्यावरणीय विध्वंसन के लिए यद्यपि इन्हीं गरीबों को उत्तरदायी माना जा रहा है, किंतु इन क्षेत्रों के मरुस्थलीकरण का कारण विकसित देशों की शोषण पर आधारित नीतियां हैं। एशिया और अफ्रीका महाद्वीप के अधिकांश मरुस्थलीय देशों में यूरोपीय देशों का लंबे समय तक शासन रहा है। इन मरुस्थलीय क्षेत्रों की प्राकृतिक वनस्पतियों का दोहन सैंकड़ों वर्षों तक व्यावसायिक आधार पर होता रहा है जिसके फलस्वरूप मरुस्थलीकरण प्रारंभ हुआ।

राजस्थान : मरुस्थलीकरण और समाधान

डा. राम नारायण शर्मा *

मरुस्थलीकरण को "भूमि की जैविक क्षमता में कमी या विनाश है, जो अंतत: मरुस्थलीय स्थिति तक पहुंचती है" के रूप में परिभाषित किया गया। पिछले 200 वर्षों के दौरान विपरीत एवं परिवर्तनशील वातावरण, सौर-उर्जा का प्रभाव, मृदा-अपक्षरण, खनिज पदार्थों का विदोहन और प्राकृतिक संपदा का अत्यधिक दोहन भूमि की जैविक क्षमता के ह्रास के कारण रहे हैं।

वर्तमान समय में संपूर्ण विश्व का लगभग 35 प्रतिशत भाग शुष्क, अर्द्ध-शुष्क और सूखे घास के मैदानों से घिरा हुआ है। इन मरुस्थलों का विस्तार विश्व के लगभग 105 देशों में आंशिक रूप से है। विश्व के शीत मरुस्थल पृथ्वी पर मानव संस्कृति के उदय के पूर्व विकसित हो चुके थे। मानव के क्रियाकलापों तथा वनों के विनाश से उष्ण मरुस्थलीय क्षेत्रों का उद्भव और विकास हुआ है। पिछले सौ वर्षों में उष्ण मरुस्थलों ने पृथ्वी के ऐसे विशाल क्षेत्रों को निगल लिया है जो किसी समय घने जंगल और उपजाऊ भूमि वाले थे। आज भी ये मरुस्थल निरंतर बढ़ते जा रहे हैं।

संयुक्त राष्ट्र संघ की एक विशेष रिपोर्ट के अनुसार अविवेकपूर्ण मानवीय कार्यकलापों ने एक करोड़ तीस लाख वर्ग कि.मी. क्षेत्र को मरुस्थलीय भूमि में बदल दिया है। सहारा का मरुस्थल प्रतिवर्ष अपनी सीमाओं को बढ़ाता जा रहा है। वैज्ञानिकों का अनुमान है कि इस शताब्दी के अंत तक सहारा के रेगिस्तान का आकार 20 प्रतिशत और बढ़ जाएगा। इसी तरह थार का मरुस्थल भी प्रतिवर्ष 13,000 एकड़ उपजाऊ भूमि को निगल लेता है।

हमारे देश के पश्चिम में राजस्थान राज्य में अरावली पर्वत श्रेणी के पश्चिम में थार का मरुस्थल फैला हुआ है जो राजस्थान राज्य के दो-तिहाई भाग में 1,75,000 वर्ग कि.मी. क्षेत्र में विस्तृत है, शेष अर्द्ध-शुष्क मरुस्थलीय भाग अरावली पर्वत श्रेणी के दक्षिण-पूर्व तथा पूर्व में स्थित है। यहां की भौगोलिक परिस्थितियां बड़ी विषम हैं। ऊंचे रेतीले टीले, धूल भरी आंधियां, न्यून एवं अल्पावधि की वर्षा, ग्रीष्म ऋतु में शरीर को झुलसाने वाली गर्मी और वनस्पति का अभाव थार के मरुस्थल का पर्यावरण है।

अरावली पर्वत श्रेणी तथा 25 से.मी. की समवृष्टि रेखा मरुस्थलीय भाग

* सहायक प्रोफेसर, भूगोल विभाग, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर

को दो भौगोलिक प्रदेशों में विभाजित करती है:

- शुष्क रेतीला मैदान—यह मरुस्थलीय भाग अरावली पर्वत शृंखला के पश्चिम तथा उत्तर-पश्चिम में विस्तृत है जिसमें राजस्थान के 12 जिले श्रीगंगानगर, हनुमानगढ़, बीकानेर, चूरू, झुंझनूं, सीकर, नागौर, जैसलमेर, बाड़मेर, जालौर, पाली तथा जोधपुर सम्मिलित है।
- अर्द्ध-शुष्क मरुस्थलीय मैदान—यह मरुस्थलीय भाग अरावली पर्वत श्रेणी के दक्षिण-पूर्व तथा पूर्व में फैला हुआ है। इस क्षेत्र के अंतर्गत राजस्थान के 20 जिले उदयपुर, राजसमंद, सिरोही, डूंगरपुर, बांसवाड़ा, चित्तौड़गढ़, भीलवाड़ा, अजमेर, जयपुर, दौसा, टोंक, बूंदी, कोटा, बारां, झालावाड़, सवाई माधोपुर, करौली, अलवर, भरतपुर तथा धौलपुर है। इसी अर्द्ध-शुष्क मरुस्थलीय मैदान में मरुस्थलीकरण का प्रसार हो रहा है जो अरावली को पार करके पश्चिमी उत्तर प्रदेश तथा दिल्ली की ओर बढ़ रहा है।

मरुस्थलीकरण के लिए उत्तरदायी प्रमुख कारण जलवायु में परिवर्तन, वनों का विनाश, अकाल व सूखे का पड़ना, भूमिगत जलस्तर में गिरावट, भूक्षरण, क्षारीयकरण, जनसंख्या वृद्धि, अनियंत्रित चराई आदि हैं।

मरुस्थलीकरण का प्रभाव न केवल राजस्थान के जन-जीवन एवं पर्यावरण पर पड़ रहा है, अपितु संपूर्ण देश के जन-जीवन एवं समूची मानव सभ्यता के लिए चुनौती बनता जा रहा है। मरुस्थलीकरण, जो कि अनेक कारणों का परिणाम है, के प्रसार से राजस्थान तथा समीपवर्ती राज्यों के पर्यावरण तंत्र में कुछ गंभीर समस्याएं पैदा हो रही हैं, जैसे अरावली पर्वत श्रेणी के विभिन्न अंतरालों से व्यापक रेत का बहाव, उष्ण और धूल भरी हवाएं, वनों का तीव्र विनाश तथा कृषि भूमि के क्षेत्र में गिरावट, नदियों एवं झीलों में मिट्टी का जमाव, मिट्टी का तीव्र कटाव, पेयजल के स्रोतों का सूखना, भूमिगत जल-स्तर में अत्यधिक गिरावट, खाद्यान्न उत्पादन में कमी, जलाऊ लकड़ी में कमी, क्षारीय बंजर भूमि में वृद्धि, चरागाह क्षेत्रों में कमी, अकाल की संभावना आदि है।

मरुस्थलीकरण केवल राजस्थान की समस्या नहीं है, अपितु उत्तर प्रदेश, हरियाणा, दिल्ली, मध्य प्रदेश, गुजरात आदि राज्यों की भी यह एक समस्या है। यदि रेगिस्तान के विस्तार को नियंत्रित करने का प्रयास नहीं किया गया तो यह तेजी से बढ़ता हुआ समीपवर्ती राज्यों के उपजाऊ कृषि क्षेत्रों को अपनी चपेट में ले लेगा। मरुस्थलीकरण के नियंत्रण के लिए निम्न उपाय प्रभावी सिद्ध हो सकते हैं:

- राजस्थान तथा समीपवर्ती राज्यों में सघन वृक्षारोपण किया जाए। पर्यावरण संतुलन के लिए आवश्यक है कि कुल भू-भाग के लगभग एक-तिहाई भाग में वन होने चाहिए। प्रदेश में वन क्षेत्र 10 प्रतिशत से नीचे चला गया है जिससे पर्यावरण विनाश के कगार पर पहुंच चुका है। इस स्थिति को बदलने के लिए स्थानीय वृक्ष प्रजातियों जैसे—आम, आंवला, जामुन, कीकर, बबूल, इजराइली बबूल, नीम, सिरिस, शीशम, शहतूत, इमली आदि का रोपण किया जाना चाहिए। इस क्षेत्र के लिए खेजड़ी वृक्ष बहुत उपयोगी रहता है। यह वृक्ष प्रतिकूल मृदा और जलवायु होने पर भी पनप सकता है। इस वृक्ष से पशुओं के लिए चारा, ईंधन की लकड़ी आदि प्राप्त होती है। इसकी पत्तियां जमीन पर गिरकर सड़कर मिट्टी की उर्वरा शक्ति में वृद्धि करती हैं। अरावली पर्वत शृंखला में 10 कि.मी. की चौड़ाई में सघन वृक्षारोपण किया जाए।
- अरावली पर्वत श्रेणी के सभी अंतरालों में घनी पादप सुरक्षा पट्टियां स्थापित की जाएं, जिससे मरुस्थल प्रसार पूर्वी राजस्थान की तरफ न हो सके।
- पशु चराई पर नियंत्रण किया जाना चाहिए और चरागाह भूमि निश्चित की जानी चाहिए।
- नए चरागाह क्षेत्रों का वैज्ञानिक ढंग से विकास किया जाए।
- जलाऊ लकड़ी पर निर्भरता कम करने के लिए ऊर्जा के अन्य सस्ते साधनों का विकास किया जाना चाहिए, जिससे वनों का कटाव कम हो सके।
- रेतीली तथा क्षारीय बंजर भूमि का उपयोग किया जाए।

वस्तुत: समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रमों के अंतर्गत गुजरात, राजस्थान और हरियाणा के शुष्क एवं अर्द्ध-शुष्क क्षेत्रों में वृक्षारोपण पर भी ध्यान दिया जाने लगा है। जापान सरकार के सहयोग से अरावली पर्वत शृंखला में वृक्षारोपण के लिए कार्यक्रम चल रहा है। चरागाह क्षेत्रों का विकास किया जाने लगा है और लवणीय भूमियों में लवणरोधी वनस्पतियां लगाई जाने लगी हैं। अभी इस तरफ और अधिक ध्यान दिए जाने की आवश्यकता है। ❑

(पृष्ठ 27 का शेष) **दो रास्ते**

है। वह अब रधिया को मनाने की सोचने लगा। वह लगभग दौड़ते हुए, रधिया का रास्ता रोक कर खड़ा हो गया और बोला, ''रधिया मुझे माफ कर दो। मैं भटक गया था। मैं मृगतृष्णा के पीछे भाग रहा था। मैं असली सुख को पहचान गया हूं। रधिया अब हमारे रास्ते दो नहीं, एक होंगे।''

रधिया यह सब सुनकर भाव-विभोर हो गई और बोली, ''ठीक है! घर चलेंगे, पहले कुछ खा तो लो। रात से भूखे हो।'' दोनों सप्रेम भोजन करके एक नई डगर की ओर चल पड़े। ❑

निमंत्रण

युवक, युवतियां
और
सेवा निवृत्त व्यक्ति

अच्छी आय प्राप्त कर सकते हैं।
प्रकाशन विभाग का एजेंट बनकर

तरीका बड़ा आसान है
सिर्फ 25 रुपये जमा कराइये
और बन जाइये खुदरा एजेंट
हर आर्डर जो आप लाएंगे
उस पर आपको मिलेगा
25 प्रतिशत कमीशन
अथवा
सिर्फ हजार रुपये जमाकर
आप बन सकते हैं थोक विक्रेता
साल में 12 हजार रुपये या ज्यादा के आर्डर पर आपको
मिलेगा 33.3 प्रतिशत
और दो लाख से ज्यादा के कारोबार पर
आप होंगे हकदार
6 प्रतिशत अतिरिक्त बोनस के।

प्रकाशन विभाग भारत के इतिहास, संस्कृति, कला, देश और उसके लोगों, पेड़-पौधों और वन्य जीवों, विज्ञान और टेक्नालाजी पर ढेर सारी सामग्री प्रकाशित करता है। इसके अलावा आधुनिक भारत के निर्माताओं और अन्य महान पुरुषों की जीवनियां, गांधी साहित्य और संदर्भ ग्रंथ 'भारत' भी विभाग द्वारा प्रकाशित किया जाता है।

विक्रय केन्द्र • प्रकाशन विभाग

पटियाला हाउस, तिलक मार्ग, नई दिल्ली-110001 सुपर बाजार (दूसरी मंजिल), कनाट सर्कस, नई दिल्ली-110001 हाल नं. 196, पुराना सचिवालय, दिल्ली-110054 कामर्स हाउस, करीमभाई रोड, बालार्ड पायर, मुंबई-400038 8, एस्प्लेनेड ईस्ट, कलकत्ता-700069 राजाजी भवन, बेसेंट नगर, चेन्नई-600009 बिहार राज्य सहकारी बैंक बिल्डिंग, अशोक राजपथ, पटना-800004 प्रेस रोड, तिरुअनंतपुरम्-695001 27/6, राम मोहन राय मार्ग, लखनऊ-226019 राज्य पुरातत्वीय संग्रहालय बिल्डिंग, पब्लिक गार्डेस, हैदराबाद-500001 प्रथम तल, 'एफ' विंग, केंद्रीय सदन, कोरामंगला, बंगलौर-560034

विक्रय केन्द्र • पत्र सूचना कार्यालय

सी.जी.ओ. काम्प्लेक्स, 'ए' विंग, ए.बी. रोड, इंदौर, (म.प्र.) 80, मालवीय नगर, भोपाल-462003 के-21, नन्द निकेतन, मालवीय मार्ग, 'सी' स्कीम, जयपुर-302001

भारत का विधान और संविधान

लक्ष्मी मल सिंघवी *

हालांकि भारत की प्राचीन और मध्यकालीन विधि प्रणाली अत्यंत विकसित रही है और गणतंत्र, लोकतंत्र और वैधानिक व्यवस्था के बारे में मूल भारतीय विचारधारा की जड़ें मानव-इतिहास के आदिकाल में भी देखी जा सकती हैं, लेकिन जैसा कि हम जानते हैं आज की भारतीय विधि प्रणाली के विकास का श्रेय ब्रिटिश वैधानिक विचारों, संस्थानों तथा उनके प्रभावों को जाता है। पिछले दो हजार वर्षों में इतिहास, भू-राजनीति, विजयों और प्रतिरोधों की चुनौतियां उभरी हैं और साथ ही समायोजन, नवीकरण और समीकरण की एक निरंतर प्रक्रिया जारी रही है, जो प्राचीन वैधानिक और संवैधानिक अवधारणाओं को आत्मसात करती रही है या फिर उन पर हावी रही है। उल्लेखनीय बात तो यह है कि भारतीय समाज ने ब्रिटिश धारणाओं और संस्थाओं को अपनाने में दृढ़ता, उत्साह, विश्वास और सृजनशीलता का परिचय दिया है।

आत्मसात करने की अद्‌भुत शक्ति

भारतीय वैधानिक व्यवस्था दो संस्कृतियों में परस्पर आदान-प्रदान का शायद विश्व का सर्वाधिक सफल सांस्कृतिक उदाहरण है और यह परिवर्तन भारत की उदारता, मेहमानबाजी और भारत में जन-प्रशासन को समाज के अनुकूल और तर्कसंगत बनाने तथा आत्मसात करने के गुणों के कारण संभव हो सका है। न्याय उपलब्ध कराने तथा राजनीतिक परिवर्तन को गति देने और सिद्धांतों को लोकतांत्रिक स्वरूप देने में नव-अभिजात्य वर्ग ने एक महत्वपूर्ण भूमिका निबाही है। भारत, जब 1947 में स्वतंत्र हुआ तब उसे एक परिष्कृत वैधानिक प्रणाली, एक सुसंगठित सरकारी सेवा, व्यावसायिक दृष्टि से प्रशिक्षित तथा राजनीतिक दृष्टि से तटस्थ रक्षा सेनाएं, एक स्वतंत्र न्यायपालिका और समृद्ध परंपराओं और निरंतरता का धनी एक स्वतंत्र कानूनी पेशा, एक मुखर प्रेस तथा अत्यंत विकसित संसदीय राजनीतिक व्यवस्था और इसकी संस्थाएं विरासत में मिलीं।

जब स्वतंत्रता पथ पर नियति से मुलाकात की अपनी यात्रा भारत ने शुरू की तब स्वतंत्रता संग्राम के दौरान अंगीकार किए गए समर्पित मूल्यों के आधार पर गणतंत्रीय शासन के ढांचे की रचना की शुरुआत हुई और यह ढांचा अंग्रेज शासकों के माध्यम से विकसित हुआ। शासन के मूल्यों और ढांचे दोनों के लिए ब्रिटिश अनुभवों का उदारता से लाभ उठाया गया और सर्वग्राही दृष्टिकोण से इसे विकसित किया गया। गांधी जी, पंडित जवाहरलाल नेहरू, सरदार पटेल, बाबू राजेंद्र प्रसाद, डा. अंबेडकर, बाबू जगजीवन राम तथा संविधान के निर्माताओं में से कई अन्य नेताओं और भारत में स्वतंत्रता तथा मानवीय गरिमा की लड़ाई लड़ने वाले कई पूर्ववर्ती तथा समसामयिक नेताओं ने अहिंसा और सविनय अवज्ञा दोनों ही हथियारों और उपनिवेशवादी शासकों के अपने ही मूल्यों और विचारों के जरिये यह लड़ाई लड़ी। लोकतंत्र और कानूनी व्यवस्था के तर्क तथा उपनिवेशवाद के विरोधाभास दोनों ही भारत के स्वतंत्रता संग्राम के दौरान ठीक उसी प्रकार उभर कर सामने आए, जिस प्रकार अमरीका के स्वाधीनता संग्राम के दौरान इन मूल्यों को देखा गया था। अमरीका का स्वतंत्रता संग्राम भारत की तुलना में बहुत थोड़ी देर चला, जिसके लिए कुछ राजनीतिक, ऐतिहासिक और सामाजिक कारण जिम्मेदार माने जा सकते हैं।

इंग्लैंड, स्काटलैंड, अमरीका, कनाडा, आस्ट्रेलिया और भारत की वैधानिक और संवैधानिक प्रणालियों में गजब की समानताएं हैं, क्योंकि इन देशों में परस्पर काफी संपर्क रहा है और क्योंकि इन देशों की वैधानिक और राजनीतिक विचारधाराओं का अंग्रेजी भाषा के माध्यम से अक्सर आदान-प्रदान होता रहा है, इनमें से किसी एक या कई देशों के न्यायिक दृष्टातों और विधायी कानूनों का अक्सर हवाला दिया जाता रहा है और उनसे मार्गदर्शन लिया जाता रहा है तथा कभी-कभी तो उनको अपनाया जाता रहा है और उन पर अमल भी किया जाता रहा है। अंग्रेजों ने भारत में जो वैधानिक प्रणाली शुरू की थी, निस्संदेह उसका उद्देश्य ब्रिटिश राज्य के हितों को ध्यान में रखना था, लेकिन शासन से जुड़े संस्थानों के क्रमबद्ध विकास में यह एक महत्वपूर्ण तथ्य था और जैसा कि आमतौर से संस्थानों में होता है, इन संस्थानों के विकास में इससे एक तेजी आ गई थी।

बर्नार्ड शा ने *मैन ऑफ डेस्टिनी* में एक अलग अंदाज में लिखा था:

"न तो यह बुरा है और न ही यह अच्छा कि आपको कोई अंग्रेज ऐसा करता नहीं मिलेगा, लेकिन एक बात तय है कि आपको कोई अंग्रेज गलत नहीं मिलेगा। वह हरेक काम सिद्धांतों के आधार पर करता है। वह देशभक्ति के सिद्धांतों पर आपसे टकराता है, वह व्यापारिक सिद्धांतों पर आपको लूटता है, वह साम्राज्यवादी सिद्धांतों से आपको गुलाम बनाता है।"

*जाने-माने विधि-वेत्ता

बर्नार्ड शा की इस कटूक्ति के बारे में एक छोटी-सी टिप्पणी की जा सकती है कि भारत पर राज करने और भारत से लड़ने, भारत को लूटने और इसे उपनिवेश बनाने वाले स्काट तथा वेल्सवासी अंग्रेज अपने साथ शासन की एक प्रक्रिया भी लाए थे, जिसमें वैधानिक विचारों, सिद्धांतों और संस्थानों का समावेश उन्होंने किया। निस्संदेह मोटे तौर पर पूर्व, पूर्व ही था और पश्चिम, पश्चिम ही, लेकिन भारत की वैधानिक और संवैधानिक प्रणाली में दोनों का मिलन भी अवश्य हुआ।

संविधान : महत्वपूर्ण पड़ाव

भारत जब 1947 में आजाद हुआ तब भारत की प्रशासन और वैधानिक प्रणालियां वही रहीं जो ब्रिटिश राज के दौरान थीं। 1935 के अधिनियम और भारत के स्वतंत्रता अधिनियम 1947 में संक्रमणकालीन ढांचे की व्यवस्था थी। भारत सरकार अधिनियम 1935 में हमें संविधान के मसौदे के लिए विरासत में एक परिचित संरचनात्मक आधार मिला तथा इस मसौदे को हम भारत के लोगों ने अंतत: अंगीकार किया और कानून बनाया तथा 26 नवंबर 1949 को हमने स्वयं को यह संविधान दिया। समग्र रूप से संविधान 26 जनवरी 1950 को लागू हुआ।

भारत के लोगों की ओर से संविधान सभा द्वारा संविधान को पारित करना, निर्विवाद रूप से स्वतंत्र भारत के इतिहास में एक महानतम पड़ाव था। यह वह संविधान है जो भारत में लोकतंत्र और कानून के प्रशासन की नींव है, यह वह संविधान है जिसने हमें समस्याओं को हल करने और संकटों से उभरने में मदद की है और राष्ट्र के इतिहास में कुछ अत्यंत कठिन परिस्थितियों का सामना करने या उसे निपटने में दृढ़ता प्रदान की है।

संविधान : मूल्यों, निर्देशों और सिद्धांतों का ढांचा

भारत का संविधान मूल्यों, निर्देशों और सिद्धांतों का एक मूलभूत ढांचा है। इसके साथ ही इसमें संस्थागत मापदंडों, समीकरणों और सिद्धांतों का भी समावेश है। संविधान सभी विधायी और प्रशासनिक कार्रवाईयों की कसौटी भी है। यह भारतीय संघवाद को नियंत्रित करता है। यह विवादों के लिए कई प्रकार के हल सुझाता है। और सबसे बड़ी बात यह है कि यह भारतीय नागरिकता के अधिकारों और दायित्वों का एक मूलभूत सार-संग्रह है। अंतत: विश्लेषण से देखा जा सकता है कि यह भारत को ही परिभाषित करता है और नियति से मुलाकात की इसकी परिकल्पना को मूर्त रूप देता है।

भारतीय संविधान की भावना की सही अभिव्यक्ति पं. जवाहरलाल नेहरू के भाषण में देखने में आती है, जो उन्होंने भारत की स्वतंत्रता के अवसर पर आधी रात को दिया था। उन्होंने कहा था:

''भारत के स्वतंत्रता संग्राम की प्रेरणा दक्षिण अफ्रीका से लौटे महात्मा गांधी से मिली और उन्होंने ही इस अभियान का नेतृत्व किया। उनका सपना सत्य और अहिंसा के सिद्धांतों पर आधारित था। उनकी अंतर्रात्मा की धीमी-सी शांत आवाज भारत के संघर्ष का संबल बनी। विभिन्न धर्मों में भाईचारा और सद्भाव गांधी जी के धर्मनिरपेक्षवाद का ताना-बाना था। पिछड़ों, गरीबों और वंचित वर्गों की स्थिति सुधारना और सामाजिक असमानताओं को दूर करना पूर्ण स्वराज के उनके स्वप्न की संपूर्णता बन गया। गांधी जी का प्रसिद्ध मंत्र पूर्ण स्वराज का सार तत्व था। यह मंत्र देते हुए उन्होंने जो शब्द कहे थे वे अभी भी हम भारत के लोगों के दिलो-दिमाग में विलक्षण रूप से गूंज रहे हैं। उन्होंने प्रत्येक भारतीय और विशेषकर उन लोगों से, जो कानून और संविधान की शक्तियों का उपयोग करेंगे, बड़े ही भावपूर्ण संदेश में कहा था:

भारतीय संविधान की प्रस्तावना में, जिसे हमने पारित व लागू किया था, विचारों का जो मूल ढांचा था, वह भी कोई कम उत्प्रेरक व उत्साहवर्द्धक नहीं था। इसमें 'भारत के लोगों' के निश्चय की घोषणा थी कि वे

सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक न्याय;
चिंतन, अभिव्यक्ति, विश्वास, आस्था और पूजा की स्वतंत्रता;
और, प्रतिष्ठा की तथा अवसरों की समानता प्राप्त करेंगे;
तथा आपस में भाईचारे को बढ़ावा देंगे,
व्यक्ति की गरिमा और राष्ट्र की एकता और अखंडता सुनिश्चित करेंगे।

संविधान पर अंतर्राष्ट्रीय क्रांतियों का प्रभाव

भारतीय संविधान में भारतीय राष्ट्र के जिन लक्ष्यों और लोकाचारों को स्पष्ट किया गया है, वे सामान्य रूप से, भारत के लोगों की स्वतंत्रता संग्राम की आकांक्षाओं से ही नहीं बल्कि महान अमरीकी, फ्रांसीसी और रूसी क्रांतियों से उत्पन्न हुए हैं जिनसे भारतीय संविधान के प्रमुख सिद्धांतों को लिया गया है। लेकिन भारत में शासन की संस्थाओं को उन विचारों और आकांक्षाओं से, विशेष रूप से भारत के अपने संविधान के विकास क्रम तथा अमरीका, आयरलैंड तथा राष्ट्रमंडल के देशों, विशेष रूप से इंग्लैंड, कनाडा और आस्ट्रेलिया के संवैधानिक अनुभवों से आकार मिला है। मोटे तौर पर कहें तो मूलभूत अधिकारों और न्यायिक समीक्षा का अध्याय अमरीकी संविधान और सार्वभौमिक मानवाधिकार घोषणा से प्रभावित हुआ है। आयरलैंड गणराज्य ने हमें राज्य के नीति-निर्देशक सिद्धांतों का एक प्रतिरूप दिया है और कनाडा तथा आस्ट्रेलिया के संविधानों ने हमारे संघीय ढांचे और विभिन्न राज्यों के बीच स्वतंत्र वाणिज्य की अवधारणा को मजबूत बनाया है। सबसे महत्वपूर्ण बात तो यह है कि भारत सरकार अधिनियम 1935 और संसदीय लोकतंत्र के वैस्टमिंस्टर माडल के जरिये ही भारत के संविधान के खाके के लिए बुनियादी संरचनात्मक सामग्री उपलब्ध हुई है।

लोकतंत्र की सुरक्षा का आधार-स्तंभ

भारत की स्वतंत्रता के 50 वर्षों के दौरान भारत ने कई ऐसी भारी कठिनाइयों के बावजूद लोकतंत्र और कानून के शासन के प्रति सराहनीय प्रतिबद्धता प्रदर्शित की है, जो द्वितीय विश्व युद्ध के बाद आजाद होने वाले कई अन्य देशों के लिए दुर्जेय सिद्ध हुई है। भारत का संविधान कानून के शासन के क्षेत्र में लोकतंत्र की सुरक्षा का एक प्रमुख आधार है।

पिछले 15 वर्षों में भारत के विशाल मध्यम वर्ग ने लोकतंत्र और कानून के शासन के मूल्यों को बनाए रखा जिसने संविधानवाद की

विचारधारा को प्रभावित किया। पिछले लगभग दो दशकों में पिछड़े वर्गों, अल्पसंख्यकों तथा अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों ने चुनावी और राजनीतिक खींच-तान के जरिये शक्ति तंत्र में अपने लिए एक नया स्थान ढूंढा है और बनाया है। हालांकि ये दबाव कई बार अलगाववादी प्रतीत हुए हैं, लेकिन इन्होंने अपने ही तरीके से भारतीय राजनीतिक प्रणाली के लोकतांत्रिक आधार को व्यापक करने में मदद दी है।

राष्ट्र के जीवन के हर कदम पर संविधान द्वारा सब वयस्कों को मताधिकार देने और कानूनी तथा न्यायिक प्रणाली की शक्ति को मजबूत करने से भारतीय लोकतंत्र में एक खुलापन और अपने किस्म की एक लोच आई है। भारत की संवैधानिक प्रणाली के कामकाज में सैंकड़ों कमियां और दोष हो सकते हैं, लेकिन हमारी संवैधानिक संस्कृति की कुछ रचनात्मक विशेषताएं भी हैं, जो हमारी प्रणाली की जीवंतता को निस्संदेह रूप से बढ़ाती हैं। खुले समाज में एक स्वतंत्र प्रेस, काफी हद तक विश्वसनीय निर्वाचन प्रणाली, एक निष्पक्ष कानूनी व्यवसाय तंत्र, एक स्वतंत्र क्रियाशील न्यायिक व्यवस्था, विविधता में एकता की भावना, सहिष्णुता का राष्ट्रीय दृष्टिकोण, धर्मनिरपेक्षता का राष्ट्रीय संकल्प, उच्च स्तरीय मानव संसाधन और बढ़ते हुए आत्मविश्वास की भावना ने भारतीय राष्ट्र को जोड़े रखा है और प्रगति के पथ पर अग्रसर बनाए रखा है। ❑

साभार : पत्र सूचना कार्यालय

<u>सफलता की कहानी</u>

छूटा शराब का अवैध व्यापार, आई घर में खुशियां अपार

जी. प्रसाद*

किसी भी देश, जनपद अथवा गांव के विकास में युवाओं का महत्वपूर्ण स्थान रहा है। उत्तर प्रदेश के टिहरी जनपद के प्रतापनगर विकास खण्ड में स्थित माजफ ग्राम के युवक मंगल दल के अध्यक्ष हैं— श्री जगबीर सिंह महर। पूर्व में माजफ गांधी ग्राम था, जो अब हाल ही में अम्बेडकर ग्राम घोषित हुआ है। श्री जगबीर सिंह महर का कहना है कि सर्वप्रथम यहां 1982-83 में युवाओं ने एक संगठन बनाया जिसमें सामाजिक कुरीतियों को समाप्त करने का बीड़ा उठाया—जैसे वन बचाओ, दहेज प्रथा तथा अशिक्षा को दूर करने का संकल्प लिया गया। नाटक आदि के माध्यम से भी गांव में जागरूकता पैदा की गई। लेकिन गांव में धीरे-धीरे विकृति आने लगी। ग्राम माजफ में अवैध देशी शराब ज्वालापुर, देहरादून और ऋषिकेश से आने लगी तथा कुछ लोगों ने अपना कार्य केवल देशी शराब बनाने में ही समेट लिया जिससे गांव का माहौल खराब हो गया और गांव में चोरी डकैती होने लगी। आम आदमी का जीना दूभर हो गया। गांव में देशी शराब की थैलियां बिकने लगीं। दुकानों के आसपास शराबियों तथा अपराधिक तत्वों की गतिविधियों को बढ़ावा मिलने लगा। माजफ गांव इस क्षेत्र का प्रमुख शराब का केन्द्र बन गया। इधर-उधर के गांव के लोग केवल शराब पीने के लिए यहां आने लगे। शराब गांव की तबाही का पर्याय बनती जा रही थी। उत्तराखंड की कर्मठ महिलाएं, जो दिन भर खेतों/घरों में काम करती हैं, शाम को शराब के नशे में धुत्त अपने पतियों के व्यवहार से तंग आने लगीं।

इस विकट स्थिति को देखते हुए 1992-93 में युवक मंगलदल माजफ के सौजन्य से अवैध शराब पर अंकुश लगाने का प्रयास किया गया लेकिन शराब माफिया चोरी-छिपे अपने व्यवसाय को अंजाम देने में सफल रहे। तब युवक मंगलदल के अध्यक्ष जगबीर सिंह महर के नेतृत्व में मद्य निषेध समिति बनाई गई, जिसके द्वारा गांव के आस-पास पूर्ण शराब बन्दी कर दी गई और समिति तथा युवक मंगलदल माजफ द्वारा अवैध शराब भट्टियों को समाप्त किया गया तथा सार्वजनिक स्थल पर शराब पीना या पिलाने पर पूर्ण प्रतिबन्ध लगाया गया। इसकी अवहेलना करने पर आर्थिक तथा सामाजिक दण्ड, जो भी उचित हो, लगाया गया। वर्तमान समय में आर्थिक दण्ड के रूप में युवक मंगलदल द्वारा वसूला गया पर्याप्त धन है, जिसे युवक मंगलदल ग्रामीण युवाओं को स्वावलम्बी बनाने तथा खेल-कूद संबंधी और गांव के विकास-कार्यों में अंशदान के रूप में अवैध शराब से प्राप्त आर्थिक दण्ड की मद से आर्थिक मदद प्रदान कर रही है।

श्री महर का कहना है कि भविष्य में वे शराब बन्दी को पूर्ण रूप से जारी रखेंगे तथा इसके प्रति जागृति हेतु जन-सहयोग से अभियान चलाएंगे, शासन द्वारा जारी विकास योजनाओं के क्रियान्वयन में भी सहयोग देंगे, साथ ही सामाजिक कुरीतियों तथा शैक्षिक जागृति हेतु सम्पूर्ण जनपद में जागरूकता अभियान चलाएंगे।

शराब बन्दी में सहायक वर्तमान समय में ग्राम माजफ एक मिसाल है। इस गांव की प्रेरणा से पास-पड़ोस के करीब 15-20 गांवों में भी इसका अनुकूल प्रभाव पड़ रहा है। अब माजफ गांव किसी भी आदर्श ग्राम से कम नहीं है। गांव के बच्चों, महिलाओं, बूढ़ों की ज़बान पर है—'छूटा शराब का अवैध व्यापार, घर में आई खुशियां अपार।' ❑

*क्षेत्रीय प्रचार अधिकारी, उत्तरकाशी

जी का जंजाल बनी : जनसंख्या

दीपक कुमार सिन्हा

यह बात सही है कि हम उन समस्याओं से विमुख नहीं हो सकते जिनका हमारे राष्ट्रीय जीवन से, हमारी भावी पीढ़ियों के सुख और समृद्धि से गहरा संबंध है। भारत में प्रतिवर्ष लगभग एक करोड़ बढ़ जाने वाली जनसंख्या से उपजी समस्या आज मानव-जीवन के लिए एक चुनौती-स्वरूप है। यह बात नहीं है कि स्वाधीनता के पूर्व राष्ट्रनायकों का ध्यान बढ़ती हुई जनसंख्या के भयंकर परिणामों की तरफ नहीं गया था। वे भी इस विषय पर सचेत थे। लेकिन स्वतंत्रता से पहले इस प्रश्न को प्रमुखता देना न तो उचित था और न ही सही।

1925 में कविगुरू रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने मारगरेट सेंगर को एक पत्र में लिखा था, 'भारत जैसे गरीब और गुलामी से पीड़ित देश में विवेक-शून्य तीव्र गति से बच्चों को जन्म देना, जिनका समुचित पालन-पोषण नहीं किया जा सकता, निर्दयतापूर्ण अपराध है।' ऐसी स्थिति में जन्म लेने वाले बच्चे स्वयं कष्ट पाते हैं, साथ ही समाज की दुरावस्था का कारण बनते हैं। जिस रफ्तार से जनसंख्या में वृद्धि होती जा रही है, वह न केवल भारत के लिए बल्कि संपूर्ण विश्व के लिए समस्या बनती जा रही है। सुप्रसिद्ध इतिहासकार आर्नोल्ड टायनवी ने इस समस्या पर प्रकाश डालते हुए कहा भी है कि "युद्ध की समाप्ति की दिशा में सबसे बड़ी बाधा यह है कि हमारे संसार में जनसंख्या आश्चर्यजनक गति से बढ़ रही है। यदि अणु शस्त्रों द्वारा मानव का विध्वंस नहीं हुआ तो संतति निरोधक प्रसाधनों के उपयोग के बावजूद संसार की जनसंख्या इतनी बढ़ जाएगी कि लोग भूखे मरने लगेंगे।"

चिंताजनक स्थिति

यह निर्विवाद है कि विज्ञान की शक्ति से भली प्रकार परिचित होते हुए भी अधिकांश विकासशील देश जनसंख्या की समस्या से मुक्त नहीं हो पा रहे हैं। संयुक्त राष्ट्र संघ के जनसंख्या विज्ञान विभाग ने दुनिया की आबादी के संबंध में जो अनुमान व्यक्त किया है, वह चिंताजनक ही कहा जाएगा। इस अनुमान के अनुसार बीसवीं शताब्दी के अंत में विश्व की जनसंख्या लगभग साढ़े छह अरब हो जाएगी। हालांकि इसका सबसे ज्यादा प्रभाव एशिया में है और उसका चालीस प्रतिशत अंश केवल भारत और चीन में। इन दोनों देशों की जनसंख्या आज भी निरंतर बढ़ रही है। इसलिए पहले की तुलना में महंगाई और गरीबी भी बढ़ी है। बढ़ते मुंहों की वजह से रोटियां अब कम पड़ती जा रही हैं। परिणामस्वरूप अनाजों का आयात किया जाने लगा है।

हरित क्रांति और विज्ञान के बढ़ते उपयोग के बावजूद आज भारतीय किसान कड़ी मेहनत करने के बाद भी सभी के लिए अनाज उपलब्ध कराने में असमर्थ हो गए हैं। एक तो जनसंख्या में असीमित वृद्धि, दूसरी ओर कृषि उत्पादन क्षमता का पर्याप्त विकास न होने की वजह से भी देश की कुल कृषि योग्य भूमि का भरपूर उपयोग नहीं हो पाता है। साथ ही आधुनिक उद्योग-धंधों में पूंजी का अत्यधिक विनियोजन, दोषपूर्ण भूमि-व्यवस्था, भूमि पर जनसंख्या का अत्यधिक बोझ, निकम्मा तथा क्षमताहीन प्रशासन और युग के अनुकूल शीघ्र ढल जाने में किसानों की अयोग्यता आदि कुछ ऐसे कारण हैं जो बढ़ती जनसंख्या की आवश्यकता की पूर्ति के लिए उन्नत कृषि के तीव्र विकास के मार्ग में बाधक हैं। कुछ भी हो, पूरा दोष केवल परिस्थितियों को नहीं दिया जा सकता। क्षमताशील प्रशासन और प्रगतिशील आर्थिक नीतियों से स्थिति में बहुत कुछ सुधार संभव है। मगर स्थिति का मुकाबला करने के लिए भारत जैसे विकासशील देश की जनसंख्या संबंधी एक मिश्रित नीति बनानी होगी, जिससे तीव्र रफ्तार से बढ़ती हुई जनसंख्या में कमी की जा सके। इन उपायों में परिवार परिसीमन और परिवार नियोजन जैसे कार्यक्रम भी आते हैं।

सामाजिक पहलू

सामाजिक जीवन की बुनियादी संस्था है—परिवार। इससे न केवल मानव-शिशु आहार प्राप्त करता है, बल्कि उसे अपनी संस्कृति, स्वभाव, आदर्श और सामाजिक मूल्य जानने की पहली पाठशाला यही होता है। यदि परिवार में आमदनी कम और खर्च अधिक है, माता-पिता के आपसी संबंध अच्छे नहीं हैं, वे दोनों बच्चे की समुचित देख-रेख नहीं कर सकते, तब उनके खान-पान, वस्त्र और शिक्षा का प्रबंध भी कायदे से नहीं हो पाता। ऐसी स्थिति में न केवल माता-पिता बल्कि बच्चे का वर्तमान और भविष्य अंधकारमय हो जाता है। जबकि आज जीवन की आवश्यकताएं बढ़ रही हैं और अधिक बच्चों को जन्म देने का अर्थ सुखी गृहस्थी को दुखी और सुखी जीवन को दुखी करना है। यहां की अधिकांश आबादी गांवों में रहती है, इस वजह से खेती पर निर्भर रहने वाले परिवारों की संख्या भी सर्वाधिक है। इन परिवारों में अधिक बच्चे होने का अर्थ है—भूमि की छोटी-सी जोत को और छोटा करना तथा खेती पर गुजर करने वाले परिवारों की संख्या बढ़ाना। ऐसे किसानों के खेतों में जितनी पैदावार होती है, उससे अधिक धन उनकी गृहस्थी में भोजन और अन्य सामानों की आपूर्ति में खर्च हो जाता है। ये उन्नत खेती के लिए पर्याप्त साधन नहीं जुटा पाते हैं। परिणाम होता है—दरिद्रता, भुखमरी, कलह, अपराध और प्रवास। इन समस्याओं की वजह से संयुक्त परिवार आज टूट रहा है और इससे जिस प्रकार की एक-दूसरे को सुरक्षा प्राप्त होती थी, वह भी अब नहीं मिलती।

यही हालत नगर और महानगरों में रहने वालों की है। आज यहां रहने वाले अधिकांश परिवार 'आमदनी कम और खर्च ज्यादा' की समस्या से जूझ रहा है। ऐसी परिस्थिति में न तो बच्चों को शिक्षा-दीक्षा और पालन-पोषण का समुचित प्रबंध हो पाता है और न ही स्वास्थ्यकर भोजन उपलब्ध है। आवास की समस्या तो यहां विकराल रूप पहले से ही धारण किए हुए है। शहरों में रहने वाले अधिकांश लोगों के पास स्वच्छ, हवादार मकान नहीं हैं क्योंकि हर पांचवां परिवार बेघर है और किराए के मकान में रहकर अपना जीवन चलाने को विवश है। महानगरों में तो आबादी का एक बड़ा हिस्सा अंधेरी, गंदी, दमघोंटू कोठरियों में रह रहा है। इस परिस्थिति में जनसंख्या वृद्धि से उत्पन्न पीड़ा का कोई अंत नहीं दिखाई देता और सुनहले स्वप्न 'परकटे कबूतर' से अधिक कुछ नहीं दिख रहे हैं।

आर्थिक पहलू

जनसंख्या का खाद्य समस्या और आर्थिक विकास से सीधा संबंध है। जिस प्रकार एक परिवार परिमित साधनों के कारण अपने सदस्यों के भरण-पोषण के भार को वहन करने में असमर्थ हो जाता है, उसी प्रकार पूरा देश अपने नागरिकों की आवश्यकता पूर्ति नहीं कर पाता और भविष्य की समुचित व्यवस्था में भी बाधा उपस्थित कर देता है।

रोजगार की स्थिति

हमारे देश की अर्थ व्यवस्था का सबसे बड़ा दोष यह है कि मानव श्रम का लाभप्रद उपयोग करने की क्षमता बहुत कम है। इस वजह से लाखों स्वस्थ और परिश्रमी नागरिक बेकार हैं। इन बेरोजगार लोगों के भरण-पोषण का भार अल्प मात्रा में उत्पादन करने वाले उन लोगों पर है जो खेती या कारखानों अथवा घरेलू उद्योग-धंधों में लगे हैं। इससे न केवल उत्पादन में क्षति पहुंची है, बल्कि पूंजी के निर्माण में भी बाधा पड़ी है। यह बेकारी भी दो प्रकार की है—पहला वह वर्ग है जो पूरी तरह बेरोजगार है। दूसरा वे लोग हैं—जिन्हें नाममात्र के रोजगार प्राप्त हैं। अर्थात जिनकी आमदनी बहुत कम है। इन दोनों प्रकार के बेरोजगार लोगों की संख्या निरंतर बढ़ती जा रही है। बेकारी की इस भीषण समस्या से निजात पाने के लिए रोजगार देने में पंचवर्षीय योजना के योजनाकारों ने भी असमर्थता जताई है। हालांकि सरकारी, अर्द्ध-सरकारी और गैर-सरकारी क्षेत्रों के साथ लघु उद्योगों में रोजगार की व्यापक संभावनाओं का पता लगा है, बावजूद इसके बेरोजगारी इतनी ज्यादा है कि उपरोक्त क्षेत्रों में सभी को रोजगार मुहैया कराने के बाद भी समस्या हल नहीं हो पा रही है। इस वजह से देश का आर्थिक विकास और संयुक्त परिवार की सीमित आय पर इन बेरोजगार लोगों का भार धीरे-धीरे इतना बढ़ रहा है कि राष्ट्र और व्यक्ति की समृद्धि का स्वप्न भंग हो चला है।

शैक्षिक और सामाजिक पहलू

हमने अपने राजनीतिक जीवन और आर्थिक विकास का लक्ष्य कल्याणकारी राज्य, जनतंत्र और समाजवाद को माना है। इसका तात्पर्य यह हुआ कि निःशुल्क शिक्षा, आत्म विकास तथा प्रगति के समान अवसर, आर्थिक समानता और सामाजिक सुरक्षा राष्ट्र के सभी नागरिकों को मिले। लेकिन समस्या यह है कि जनसंख्या वृद्धि से उपजी समस्याओं ने इन सभी की कमर तोड़ दी है। एक ओर तो हम ऊंचे लक्ष्यों, उद्देश्यों और आदर्शों की बात करते हैं तो दूसरी ओर ठीक इसके विपरीत दशा को प्राप्त करने पर विवश हो जाते हैं। यदि प्रति व्यक्ति उत्पादन में वृद्धि नहीं होती है, सामाजिक सेवाओं में लगाने के लिए अतिरिक्त पूंजी उपलब्ध नहीं होती है, तो यह सभी लक्ष्य और उद्देश्य कोरी कल्पना रह जाएंगे। यदि इसी गति से जनसंख्या बढ़ती रही तो बढ़ती जनसंख्या के लिए पाठशालाएं, स्कूल, कालेज और विश्वविद्यालय, अस्पताल, नर्स और डाक्टर, बीमारों और बेरोजगारों को भत्ता, अनाथों को आश्रय और भरण-पोषण, बूढ़े व्यक्तियों को पेंशन, रहने के लिए मकान—यह सब कुछ कायदे से नहीं चल सकता। हमारी आर्थिक नीति में मौलिक परिवर्तन भी नहीं हो पाता जबकि इसमें समयानुरूप फेर-बदल तो हो ही जाता है। जरूरत है बुनियादी परिवर्तन की। बुनियादी परिवर्तन का पहला लक्षण मानव-श्रम का संपूर्ण उपयोग और मनुष्य के उपभोग की अधिक से अधिक सुविधाएं होनी चाहिए।

सुझाव

यदि यहां के मानव-श्रम और अनुकूल वातावरण के अनुसार मौजूद साधनों को मानव-हित में नियोजित किया जाए, तो निश्चय ही सुख और समृद्धि की मुस्कान से समाज भरा-पूरा हो सकता है। यदि यहां के नागरिक अपना भाग्य स्वयं बदलने का संकल्प कर लें तो क्या जापान की तरह भारत भी उन्नत राष्ट्र की श्रेणी में नहीं आ सकता? जनसंख्या पर नियंत्रण भी संभव है और मानव-श्रम तथा पूंजी के संपूर्ण उपयोग का मार्ग भी प्रशस्त किया जा सकता है। इसलिए जरूरी है कि हम सद्बुद्धि का परिचय देते हुए इस जी के जंजाल को रोकने की पहल करने का संकल्प लें ताकि इक्कीसवीं शताब्दी में अपने देश को उन्नत राष्ट्र की श्रेणी में पहुंचा कर स्वयं के और भावी पीढ़ी के जोवन को सुखमय बना सकें। ❑

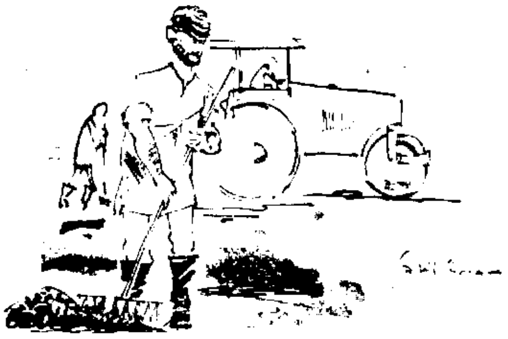

कुरुक्षेत्र 40 वर्ष पहले

बच्चों की कहानियां*

महावीर त्यागी

"स्टेशन मास्टर साब, पापा आज जल्दी नहीं जाएंगे, तुम अपनी रेल को जल्दी छोड़ देना," टेलीफोन पर कोई ऊटपटांग नम्बर मिला कर मेरे चार वर्ष के नाती नानू ने उपर्युक्त वाक्य कह कर टेलीफोन रख दिया और मुझसे आकर बोला—"पापा, मैंने रेल वालों को बोल दिया है कि पापा को देर हो जाएगी। तुम रेल को रोके रहना, अभी तुम धीरे-धीरे खाना खाओ और फिर कुछ देर आराम करके स्टेशन जाना।" अनिल ने पहली बार इतने बड़े जाल-बट्टे का खेल खेला। मुझे रात को गाड़ी से देहरादून जाना था, सीट बुक हो चुकी थी और बिस्तरा बांध रहा था। उन्हें मेरा बाहर जाना पसंद नहीं है, क्योंकि रोज रात को मेरे पास सोते हैं और कहानी सुनते हैं। दिन में कई बार अपनी अम्मां की शिकायत लगा कर जिद्द करते हैं कि "पापा, अम्मां को डांटो।" मैं झूठ-मूठ "खबरदार मेरे नानू को तंग करा तो"—कह देता हूं। फिर उसके मुंह को देख कर कहते हैं—"पापा, इतने जोर से डांटो कि अम्मां को रुला दो।" वह झूठ-मूठ रो देती हैं। हमारा सबका ख्याल था कि घर में यह मुझको सबसे ज्यादा प्यार करते हैं। आज मैंने परीक्षा ले ली, पूछा कि "नानू तुम मेरे साथ देहरादून जाओगे या अम्मां के साथ दिल्ली रहोगे।" उसने दोनों की ओर बारी-बारी से देखा और अम्मां की गोद की ओर बढ़ते हुए बोला—"मैं अम्मां के पास।" वैसे तो मैं जानता था कि खून पसीने से गाढ़ा होता है। फिर भी जरा मलाल हुआ कि कैसे छलिया हैं, यह कागज तो मेरे फाड़ते हैं, दिन-रात बंदर की तरह मेरे पीछे-पीछे लगे रहते हैं पर सचमुच वह प्यार करते हैं अपनी अम्मां को।

फिर उसकी टेलीफोन वाली बात याद करके तो मुझे सचमुच अपने से ग्लानि होने लगी क्योंकि वास्तव में दोषी मैं ही हूं। उसने आज तक जो कुछ भी सीखा है, मुझसे सीखा है। मैं ही हूं कि जो अपने दुधमुंहे निर्दोष नाती के मानसिक विकास में जहर भरे इंजेक्शन लगा रहा हूं। कहने को तो हम सब बड़ी उमर वाले, बच्चों को खिलाते हैं, पर जैसा कि मेरे एक मित्र ने बताया कि वास्तव में हम बच्चों को खिलाने के बजाय खुद उनसे खेलते हैं। वे हमारे खिलौने हैं, उनसे जी बहलाते हैं और उनके बहाने हम चाहे जितना नाचें, गाएं, खेल करें, कुत्ते की बोली बोलें या बिल्ली की, दुनिया हमारी हंसी भी नहीं उड़ाती, "वह देखो बिल्ली आई। कौए, अनिल का कान पकड़ के इसे पेड़ पर ले जा।" "मत आना कौए, पापा तुझे पकड़ के अपनी जेब में छिपा लेंगे, फिर रोते फिरोगे, हां।" कभी मुट्ठी में पैसे छिपा कर छूमंतर, काली-कलकत्ते वाली कह कर चीजों को छिपाने लगा। मैं मजे ले रहा हूं। रात को रोज कहानी सुनानी पड़ती हैं। कहां तक नित नई कहानियां सुनाऊं। झूठ-मूठ की मनगढ़ंत कहानी सुनानी पड़ती हैं। वह भी चोर-उच्चके, भूत-प्रेत, जेब कतरे, ठग, शराबी, पागल और तीतर बटेर की। जो भी हमें स्वयं प्रिय लगती हैं, उसी विषय की सुनाते हैं और उसी स्तर का खिलवाड़ भी करते हैं, ठीक उन्हीं दिनों में कि जब उसके भावी चरित्र और भाग्य की नींव पड़ रही है। यानी दो वर्ष की आयु से सात वर्ष की आयु तक। हम अपनी संतान के मन में स्वार्थ, भय, लालच, चोरी, जालसाजी, कतल, खून और बदमाशी के संस्कार ऐसे कूट-कूट कर भर देते हैं कि जैसे किसी विशाल भवन की नींव कूटी जाती है। इन बुनियादी विषैले संस्कारों का उपचार बड़े हो जाने पर ऊंची से ऊंची धर्म-शिक्षा भी नहीं कर सकती। इसी तरह अपने हाथों से अपनी संतान को चरित्रहीन बना कर हम उम्र भर रोते हैं। मेरा विश्वास है कि हर व्यक्ति के चरित्र में अपने बचपन की झलक अवश्य मिलती है। इसी वास्ते बड़ों ने कहा है कि 'पूत के पांव पालने में ही दीख पड़ते हैं।'

एक डाक्टर को जो 20 वर्ष से विलायत में काम करते हैं और जो कुछ दिनों के लिए दिल्ली आए थे, मैंने उनकी मुस्कराहट से पहचान लिया कि वह श्री राजगोपालाचार्य के निकट सम्पर्क में रहे होंगे। उन्हें आश्चर्य हुआ, क्योंकि जैसा उन्होंने बताया वह बचपन में राजा जी के साथ खेले और पढ़े थे। जिनके स्कूल मास्टर पढ़ाते हुए 'यू सी', 'यू सी', कहते हैं, वे विद्यार्थी बूढ़े होने तक 'यू सी', 'यू सी' कहते हैं।

*कुरुक्षेत्र, नवंबर 1958 अंक से उद्धृत

हमारी सरकार भारत के उत्थान के लिए तरह-तरह की योजनाएं बना रही है और आर्थिक संकटों का सामना भी कर रही है, पर हमें आर्थिक विज्ञान, उद्योग और व्यवसाय की वृद्धि से क्या लाभ होगा, यदि हमारा नैतिक स्तर ऊंचा न हो सका? खुली आंखों हम अपनी संतान का ह्रास देख रहे हैं। यह ह्रास केवल स्कूल-कालेज के बच्चों को अनुशासन की शिक्षा देने से नहीं रुकेगा। इसके लिए हमें मां के पास सोते हुए उन बच्चों को पकड़ना होगा जो कहानी सुनने के लिए उतावले हो रहे हैं। वास्तव में ये कहानियां नैतिक उत्थान की रामबाण गोलियां हैं। आज किसी भी मां को चरित्र उत्थान की कहानियां याद नहीं हैं और किसी को यह अधिकार नहीं है (चाहे वह मां ही क्यों न हो) कि भारत की भावी संतति के संस्कारों को आजन्म रोगी बना दे।

सरकार को चाहिए कि वह मनोविज्ञान के पंडितों का एक ऐसा बोर्ड बिठाए जो एक प्रतियोगिता की घोषणा कर दे जिससे भारत की तमाम भाषाओं के लेखक अच्छी से अच्छी कहानियां लिखें और उनमें से जो कहानियां 'अबोध शिक्षा कोष' के लिए स्वीकार हो जाएं, उनको प्रति कहानी के लिए कम-से-कम 100 रुपये पुरस्कार दिया जाए। फिर इस प्रकार इकट्ठी की हुई सारी कहानियां बुद्धि के विकास के अनुसार 2 से 7 वर्ष के बच्चों के लिए 6 पुस्तकों के रूप में हर भाषा में छपवा दी जाएं और उनकी करोड़ों प्रतियां हर घर में मुफ्त बांट दी जाएं। इन कहानियों के द्वारा हम छुआछूत, जाति-बिरादरी और भाषा-प्रदेश आदि के भेद-भाव को सदैव के लिए मिटा सकते हैं। इन्हीं कहानियों के द्वारा हम भावी भारत का भविष्य उज्ज्वल कर सकते हैं। हम अपनी सन्तान को तेजस्वी और बलवान बना सकते हैं।

मेरी यह भी सलाह है कि रोज रात्रि को साढ़े आठ बजे कम-से-कम एक कहानी रेडियो पर बच्चों को हर भाषा में सुनाई जाए। यदि भारत को उठाना है तो उसकी नींव मजबूत करनी पड़ेगी। ❑

('आकाशवाणी' के सौजन्य से)

कुरुक्षेत्र की विज्ञापन की दरें

	सामान्य दर			चार विज्ञापनों के अनुबंध की दर		
	अंग्रेजी		हिन्दी	अंग्रेजी		हिन्दी
	रंगीन	श्वेत/श्याम	श्वेत/श्याम	रंगीन	श्वेत/श्याम	श्वेत/श्याम
	रुपये	रुपये	रुपये	रुपये	रुपये	रुपये
पूरा पृष्ठ	—	2,500	1,600	—	2,300	1,300
आधा पृष्ठ	—	1,500	900	—	1,300	700
पिछला आवरण पृष्ठ	9,400	5,000	2,300	8,800	4,800	1,900
अन्दर का आवरण पृष्ठ	6,300	3,400	2,100	5,600	3,100	1,800

विज्ञापन संबंधी अन्य जानकारी

पूरा आकार	:	21 से.मी. × 28 से.मी.
मुद्रित क्षेत्र	:	17 से.मी. × 24 से.मी.
मुद्रण प्रणाली	:	आफसेट प्रेस
स्वीकार्य विज्ञापन सामग्री	:	केवल आर्टवर्क/आर्टपुल/पोजिटिव
विज्ञापन स्वीकार करने की अंतिम तिथि	:	60 दिन पहले
डिमांड ड्राफ्ट देय हो	:	निदेशक प्रकाशन विभाग के नाम नई दिल्ली में देय
पता जिस पर विज्ञापन भेजा जाए	:	श्री के.एस. जगन्नाथ राव, विज्ञापन एवं प्रसार प्रबंधक प्रकाशन विभाग, ईस्ट ब्लाक 4, लेवल 7, आर.के. पुरम, नई दिल्ली-110066 टेलीफोन : 6105590 (कार्यालय) 6116185 (निवास) फैक्स : 6175516, 6193012, 3386879

मार्गदर्शन के अभाव में भटकती ग्रामीण युवा पीढ़ी

महर उद्दीन खां

प्रत्येक लघु और कुटीर उद्योग में बढ़ते मशीनीकरण और कार्यालयों में कम्प्यूटर के प्रयोग ने यों तो बेरोजगारी बढ़ाने में महत्वपूर्ण योगदान किया है मगर शिक्षित ग्रामीण युवकों में से अधिकांश को बेरोजगारी का कारण उनके लिए समुचित दिशा-निर्देशन या मार्गदर्शन का अभाव है जिसके कारण अधिकांश ग्रामीण शिक्षित युवक बेरोजगारी की समस्या से जूझ रहे हैं। गांव से नाता होने के कारण इस समस्या के प्रत्यक्ष दर्शन के दो उदाहरण यहां प्रस्तुत हैं।

पहला उदाहरण 70 के दशक का है। उस समय ग्रामीण क्षेत्र के कालेजों में साइंस साइड का प्रवेश हो चुका था। कला विषय आर्ट साइड के नाम से जाने जाते थे। साइंस साइड के बारे में प्रचार था कि इस साइड के विषय पढ़ने वाले छात्र डाक्टर या इंजीनियर बनेंगे। अत: आठवीं कक्षा पास करने के बाद हर अभिभावक अपने बच्चे को साइंस साइड में प्रवेश दिलाना चाहता था। नतीजा यह हुआ था कि आर्ट साइड की कक्षाएं खाली होने लगी थीं तथा साइंस की कक्षाओं में भीड़ लग गई थी। एक-एक कक्षा को कई-कई भागों में बांटना पड़ा तथा साइंस के लिए जो प्रयोगशालाएं बनाई गई थीं, वे छोटी पड़ने लगीं। इसके साथ ही मेंढक की चीर-फाड़ करने वाला नौवी-दसवीं कक्षा का हर छात्र डाक्टर बनने के सपने संजोने लगा। सपने संजोना कोई बुरी बात नहीं, मगर उचित मार्गदर्शन के अभाव में सपने संजोने का नतीजा यह हुआ कि हाई स्कूल की परीक्षा में फेल होने वाले अधिकांश छात्र साइंस साइड के होते थे। एक या दो बार फेल होने पर अनेक छात्रों ने साइड बदल कर या तो आर्ट साइड ले ली या फिर कालेज को ही अलविदा कह दिया। यहां एक तथ्य यह भी था कि उस समय ग्रामीण क्षेत्र के अधिकांश इंटर कालेजों के हाई स्कूल में तो साइंस साइड की व्यवस्था कर दी गई थी मगर इंटरमीडिएट में ऐसी व्यवस्था नहीं हो पाई थी। अत: हाई स्कूल के बाद जो दो-चार छात्र समर्थ थे, वह तो पास के शहर में साइंस पढ़ने चले गए। शेष को मजबूर होकर इंटरमीडिएट में फिर से आर्ट साइड में आना पड़ा।

दूसरा उदाहरण आज का है। कुछ वर्षों से कामर्स विषयों की लोकप्रियता बढ़ी है तथा कम्प्यूटर भी लोकप्रिय हुआ है। अत: ग्रामीण छात्रों का इस ओर आकर्षित होना स्वाभाविक है। इसलिए आज साइंस साइड इतनी लोकप्रिय नहीं जितनी कामर्स साइड हो रही है, अत: अनेक ग्रामीण युवक अपनी क्षमताओं से अपरिचित तथा समुचित मार्गदर्शन के अभाव में कामर्स साइड ले रहे हैं तथा उनमें से अधिकांश फेल होकर या तो साइड बदल रहे हैं या घर बैठ कर बेरोजगारों की भीड़ में शामिल हो रहे हैं। कम्प्यूटर प्रशिक्षण का आलम यह है कि एक रिक्त स्थान के लिए सैंकड़ों कम्प्यूटर प्रशिक्षित युवक हाजिर हो जाते हैं।

गांवों में शिक्षा ग्रहण कर रहे युवक का भविष्य कैसे निर्धारित होता है, इसके भी कुछ उदाहरण प्रस्तुत हैं। रामभरोसे का लड़का इंटरमीडिएट के बाद सिविल इंजीनियर्स में डिप्लोमा कर आया। बेरोजगारी के दौर में उस पर दिल्ली नगर निगम के एक अफसर की नजर पड़ गई। शादी के साथ-साथ इस अफसर ने रामभरोसे के लड़के के लिए नगर निगम में अस्थायी नौकरी का जुगाड़ भी कर दिया जो तीन साल बाद स्थायी हो गई। रामभरोसे का लड़का इंजीनियर बन गया तो पड़ोस के और भी कई लोग अपने लड़कों को इंजीनियर बनाने का स्वप्न देखने लगे। दो-चार साल में जैसे-तैसे इंटरमीडिएट किया तो किसी प्रतिष्ठित संस्था में प्रवेश नहीं मिला। मैरिट इतनी थी ही नहीं, मगर मां-बाप पर इंजीनियर बनाने की धुन सवार थी। इसलिए जैसे-तैसे धन का जुगाड़ कर दक्षिण भारत की एक संस्था में डोनेशन देकर सिविल इंजीनियरिंग में प्रवेश दिलाया। तीन साल बाद यह डिप्लोमा कोर्स पूरा हुआ। चार साल शिक्षा के और तीन साल ट्रेनिंग के, सात साल में जमाना बहुत आगे निकल चुका था। अधिकांश सरकारी निर्माण-कार्य ठेके पर दिए जाने लगे थे। बेचारे तीन-चार साल तक सरकारी नौकरी का प्रयास करते रहे। जहां भी जगह दिखाई देती, वहीं आवेदन करते। मगर वहां वेतन दो-ढाई हजार से आगे नहीं बढ़ा तो नौकरी छोड़ दी। इस बीच यह हुआ कि सरकारी नौकरी के चक्कर में शिक्षा भी आगे नहीं बढ़ाई। अंत में मजबूर होकर पास के कस्बे में स्पेयर पार्ट की दुकान खोलनी पड़ी। दुकान चल पड़ी और आज यह युवक अन्य युवकों को यही सलाह देता है कि नौकरी के चक्कर में न पड़ कर अपना कोई धंधा शुरू कर दो।

ऐसी ही सलाह असलम नामक युवक भी अन्य को देता है। असलम ने बी.ए. के बाद टाइप सीखी और फिर कम्प्यूटर भी सीखा। बी.ए. में कोई खास डिवीजन नहीं पाई थी तथा अंग्रेजी भी कमजोर थी। चार साल तक लगातार नौकरी के लिए प्रयास करता रहा, मगर नौकरी न तो किसी सरकारी विभाग में मिली और न किसी संस्थान में मिली। इसी दौरान असलम को किसी ने सलाह दी कि वह अल्पसंख्यक वित्त निगम से कर्ज लेकर अपना कोई धंधा शुरू क्यों नहीं कर देता। असलम और उसके पिता के सामने इस सलाह को मानने के अलावा और कोई चारा नहीं था। थोड़ी

दिक्कत तो हुई मगर वित्त निगम से फोटोकापी मशीन के लिए कर्ज मिल गया। असलम ने फोटोकापी के साथ टाइप सिखाने तथा लेमिनेशन का काम भी शुरू कर दिया। फिर किसी ने सलाह दी कि इसी दुकान में पी.सी.ओ. भी चल सकता है। काफी भागदौड़ के बाद असलम ने पी.सी.ओ. भी मंजूर करा लिया। आज असलम ही नहीं, उसके छोटे भाई को रोजगार मिल गया है तथा काम इतना बढ़ गया है कि असलम ने फोटोकापी की एक और मशीन खरीद ली है तथा अपने और अपने भाई के अतिरिक्त दो युवकों को नौकरी पर रख लिया है।

अब अगर रामभरोसे के पड़ोसियों के लड़कों तथा असलम का मार्गदर्शन करने वाला कोई होता तो जो काम उन्होंने चार-पांच साल बाद आरंभ किया था, उसे वह पहले शुरू कर बेरोजगारी से बच सकते थे तथा अपने परिवार को भी आगे बढ़ा सकते थे। यहां एक उदाहरण गजराज का भी देना उचित होगा। हाई स्कूल के बाद गजराज बेरोजगारों की लाइन में खड़ा हो गया। गजराज के पिता के एक मित्र पास के कस्बे में आढ़ती थे। गजराज के पिता ने उससे गजराज की नौकरी के बारे में कहा तो आढ़ती ने कोई काम शुरू करने की सलाह दी। काम शुरू करने के लिए पैसा चाहिए था जो गजराज के पिता के पास नहीं था। आढ़ती ने इस समस्या का भी समाधान कर दिया। गांव के पास के जोहड़ में फटेरा खड़ा था। आढ़ती ने सलाह दी कि इस फटेरे की चटाई बना कर पैसा कमाया जा सकता है। बात गजराज के पिता की समझ में आ गई। गजराज को चटाई बनाना सीखने के लिए पास के एक गांव भेज दिया। पन्द्रह दिन में गजराज चटाई बनाना सीख आया। फटेरा मुफ्त मिल ही रहा था इसलिए वह चटाई बनाने में जुट गया। पहले अकेला जुटा था, बाद में दो मजदूर और लगा दिए। फटेरे की चटाई गोदामों में फर्श पर बिछाने के काम आती है। आढ़ती के सहयोग से गजराज का धंधा चल निकला। कुछ वर्ष बाद गजराज ने चटाई का धंधा मजदूरों को सौंप दिया तथा स्वयं एक परचून की दुकान खोल कर अब उसका पूरा परिवार मौज कर रहा है। गजराज को सही समय पर सही सलाह मिल गई, अत: वह वर्षों तक बेरोजगारी की त्रासदी झेलने से बच गया।

इन उदाहरणों से स्पष्ट है कि अगर ग्रामीण युवकों को सही समय पर ही मार्गदर्शन मिल जाए तो उन्हें बेरोजगारी की भीड़ से अलग किया जा सकता है और उन्हें गांव में ही या गांव के आस-पास रोजगार के साधन उपलब्ध हो सकते हैं। गांवों में रोजगार के पर्याप्त साधन हो सकते हैं। रुई धुनने तथा तेल निकालने की मशीनें लगा कर बेरोजगारी दूर की जा सकती है। अनेक सरकारी और सहकारी योजनाओं के माध्यम से आज कर्ज उपलब्ध कराने की भी व्यवस्था है, मगर मार्गदर्शन के अभाव में ग्रामीण युवक इन योजनाओं का लाभ नहीं उठा पाते।

अब हालत यह है कि समुचित मार्गदर्शन के अभाव में आज गांव का प्रत्येक शिक्षित युवक नौकरी की ओर दौड़ लगाता है, मगर आज शिक्षित युवकों की इतनी भीड़ है कि नौकरी का मामला एक अनार सौ बीमार की स्थिति में है। अंत में होता यही है कि नौकरी न मिलने पर अनेक युवक बाद में कोई निजी धंधा ही अपनाते हैं और साथ ही पछताते भी हैं कि उन्होंने यह धंधा दो-चार साल पहले ही क्यों न शुरू कर दिया था।

आज गांवों के लिए मछली पालन, शूकर मालन तथा नर्सरी स्थापित करने के ऐसे अनेक धंधे हैं जिनके लिए सरकारी तथा सहकारी संस्थाएं कर्ज पर धन उपलब्ध कराती हैं तथा इन धंधों के लिए सरकारी स्तर पर प्रशिक्षण की भी व्यवस्था है। मगर गांव के युवक इन योजनाओं का सही मार्गदर्शन के अभाव में लाभ नहीं उठा पाते।

अत: ग्रामीण युवकों को बेरोजगारी की त्रासदी से बचाने के लिए जरूरत है कि शिक्षा के दौरान उनके समुचित मार्गदर्शन की व्यवस्था की जाए। ग्रामीण युवकों के लिए मार्गदर्शन के ऐसे केन्द्र कालेज स्तर पर ही स्थापित किए जा सकते हैं। ब्लाक स्तर पर भी ऐसे केन्द्रों की व्यवस्था की जा सकती है। ❑

लघु कथा

सबसे सुंदर वस्तु

निहारिका

एक बार एक कलाकार को विश्व की सबसे सुंदर वस्तु का चित्र तैयार करने का मन हुआ। उसने धर्मगुरू से पूछा :

'संसार की सबसे सुंदर वस्तु क्या है?'

'श्रद्धा! उस श्रद्धा के दर्शन तुम्हें प्रत्येक धर्मस्थान में होंगे।'

कलाकार को संतोष न हुआ। एक नव वधु से उसने पूछा, 'दुनिया की सुंदरतम वस्तु क्या है?'

'प्रेम! प्रेम हो तो निर्धनता में भी समृद्धि प्रतीत होती है।'

कलाकार का मन न माना।

उसने एक सैनिक से पूछा, 'इस संसार में अति सुंदर क्या है?'

सैनिक ने कहा, 'शांति जगत की सबसे सुंदर वस्तु है। युद्ध जगत की सबसे कुरूप चीज है।'

श्रद्धा, प्रेम और शांति—सोचते हुए कलाकार अपने घर पहुंचा उसे देखते ही उसकी संतानें और पत्नी दौड़ पड़े। बच्चे उससे लिपट गए। पत्नी मुस्कराने लगी। कलाकार ने सोचा 'मेरी संतानों की आंखों में श्रद्धा है। पत्नी की आंखों से प्रेम बरस रहा है। मेरा घर शांति की दिव्य भूमि है। उसने सबसे सुंदर वस्तु का शीर्षक दिया—'घर'। ❑

विज्ञान, प्रौद्योगिकी और ग्रामीण समाज

डा. दिनेश मणि*

जब भी हम भारतीय जनता की बात करते हैं तो हमें यह ध्यान ही नहीं रहता कि भारतीय समाज आज भी बुनियादी तौर पर ग्रामीण समाज है, क्योंकि हमारा मुख्य व्यवसाय आज भी खेती है। हमें यह बार-बार याद दिलाना पड़ता है कि गांवों में रहने वाली लगभग 74 प्रतिशत जनता खेती और उससे जुड़े उद्योगों पर निर्भर करती है। कुल मिलाकर यह ग्रामीण समुदाय आधुनिक प्रौद्योगिकी की लहर से बहुत अधिक प्रभावित नहीं हो पाया है। अभी कुछ समय से ही भारतीय कृषि में कुछ बदलाव दिखाई दे रहे हैं और विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी के फल गांव वाले कुछ-कुछ चखने लगे हैं।

यहां यह बात गौरतलब है कि जनता को इससे कोई मतलब नहीं है कि कितने वैज्ञानिक नोबेल पुरस्कार प्राप्त करते हैं या कितने लोग विदेशों में जाकर वैज्ञानिक खोजें करके अपना नाम रोशन करते हैं। जनता तो यह देखती है कि उन्हें कितना लाभ हुआ और कितनी राहत मिली। सदियों तक हमारे देश की जनता विदेशी साम्राज्य के चंगुल में शोषण को दासता की देन के नाते सहती रही,परन्तु आज जब हम स्वतन्त्रता की 51वीं वर्षगांठ मना रहे हैं तो हमें यह ध्यान रखना चाहिए कि विज्ञान और प्रौद्योगिकी की सफलता इसी बात से जानी जाएगी कि वह आम आदमी के जीवन को कितना सुखी बनाती है। यही वह आधार है जिस पर हमें विज्ञान और प्रौद्योगिकी को नया मोड़ देना होगा। इसी को सामने रखते हुए हमें अपनी प्राथमिकताएं निर्धारित करनी हैं। जब लक्ष्य स्पष्ट होता है, तो रास्ता तय करने में कोई कठिनाई नहीं होती। हमारा लक्ष्य स्पष्ट है और वह यह है कि विज्ञान देश की सेवा के लिए है, जनहित के लिए है। जो यह सोचते हैं कि विज्ञान का मतलब है केवल खोज किए जाना, कुछ नए तथ्य और नए सिद्धांत निकालना है, वे शायद उन परिस्थितियों से परिचित नहीं हैं, जिनसे कोई भी नया विकासशील राष्ट्र गुजरता है।

* प्राध्यापक, रसायन विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

पुराने जमाने में अनेक बड़ी और महान सभ्यताएं हुई हैं लेकिन उनमें जनसाधारण का जीवन हमेशा दुख से भरा हुआ रहा। यूनान की सभ्यता जब अपनी चरम सीमा पर थी तो कहा जाता है कि वहां के लोग दास प्रथा को समाप्त करने का मतलब स्वयं एथेन्स को समाप्त कर देना समझते थे। स्वयं अरस्तू ने जोर देकर कहा था कि जब तक मनुष्य ऐसी मशीन का आविष्कार नहीं कर लेता जो शरीर तथा श्रम का स्थान ले सके, गुलाम प्रथा सभ्यता का आधार बनी ही रहेगी। गुलामों के स्थान पर मशीनों का विकास करने में हमें 2000 वर्ष से भी अधिक का समय लगा और आज हम चाहें तो विज्ञान को मनुष्य की सेवा में लगाकर एक ऐसी सभ्यता का निर्माण कर सकते हैं जिसमें सभी लोग शान्ति और आनन्द से जीवन बिता सकते हैं और अभावों से मुक्ति पा सकते हैं।

आज सभी यह मानते हैं कि किसी भी देश में जनता के जीवन-स्तर को ऊंचा उठाने की कुंजी विज्ञान और प्रौद्योगिकी में निहित है। लेकिन इसके साथ इस बात को भी ध्यान में रखना जरूरी है कि इस कुंजी को केवल घुमाने से ही काम पूरा नहीं हो सकता। एक बार जब हम विज्ञान और औद्योगिकरण की राह पर चलना आरम्भ कर देते हैं तो हम उस सदियों पुराने संतुलन को पूरी तरह से बिगाड़ देते हैं जो इस काल में पूरी तरह से विकसित होकर स्थिर हो चुका था। पुराने संतुलन के गड़बड़ाने से नई समस्याओं की एक बाढ़-सी आ जाती है और इनमें सबसे महत्वपूर्ण मृत्यु-दर कम हो जाने के कारण जनसंख्या में तेजी से वृद्धि होना है। इसलिए हमें अब एक ऐसा नया संतुलन स्थिर करने की दिशा में बढ़ना है जो विज्ञान और टेक्नोलोजी के पूर्ण उपयोग पर आधारित हो और इसे हमें जितनी जल्दी संभव हो सके, प्राप्त कर लेना चाहिए। किन्तु अगर हम लड़खड़ाते हुए कदमों से आगे बढ़ेंगे, अगर हमारे वायदे और विश्वास अधकचरे हुए और उनमें आस्था की कमी हुई तो हमारे द्वारा पैदा की हुई यह नई स्थिति पहले से भी अधिक गई-बीती सिद्ध हो सकती है, क्योंकि विज्ञान और टेक्नोलाजी से खिलवाड़ करने से स्थिति पहले से भी अधिक बुरी हो सकती है।

यदि गहराई से सोचा जाए तो समाज की प्रगति, सत्य को पाने की उसकी इच्छा और उसे प्राप्त करने की उसकी योग्यता पर निर्भर करती है। साथ ही इस बात पर भी कि मानव-समाज सत्य की खोज को अपना सर्वोच्च कर्तव्य तथा दायित्व माने। इस संदर्भ में यह याद रखना महत्वपूर्ण है कि विज्ञान का बुनियादी गुण तथ्यों पर आधारित अनुभवों को बटोरते जाना है। जैसे-जैसे विज्ञान आगे बढ़ता है, वह विविध क्षेत्रों में प्राप्त उन अनुभवों को इकट्ठा करता चला जाता है जो आरंभ में एक-दूसरे से बाह्य रूप में किसी भी प्रकार संबंधित दिखाई नहीं पड़ते। इस संबंध में जैसा कि रेलहार्ड-डी-चारडीन ने अपनी पुस्तक 'दि फेनोमेना आफ मैन' में

लिखा है—"यह पृथ्वी न केवल करोड़ों विचारशील एककों (अर्थात मनुष्यों) से, बल्कि केवल एक अविछिन्न विचार पुन्ज से आच्छादित है जो आगे जाकर विचार-क्षेत्र में ग्रहों जैसा विशाल और व्यापक रूप धारण कर लेता है।"

आधुनिक युग में विज्ञान और टेक्नोलाजी का वास्तव में आश्चर्यजनक और आशातीत विकास हुआ है, किन्तु जहां तक परार्थवाद, नैतिकता और जीवन के वास्तविक मूल्यों का प्रश्न है, मानव की प्राचीन सभ्यताओं की तुलना में इन क्षेत्रों में कोई ऐसी प्रगति नहीं हुई जिस पर इस युग का मानव गर्व कर सके। हम इस तथ्य को यह कह कर नहीं टाल सकते कि इसका हमारे जमाने से कोई संबंध नहीं है। विशेष रूप से तब, जब हम एथेन्स के स्वर्ण युग में घटने वाली इस बात को पढ़ते हैं कि उस जमाने में भी एवीस्टाइट्स जैसे ईमानदार आदमी का होना एक उत्तेजनापूर्ण, लगभग राक्षसी समाचार समझा जाता था और उस जमाने में भी लोग अपने को ईमानदार कहलाने की अपेक्षा चतुर कहलाना अधिक श्रेयस्कर समझते थे, क्योंकि वे ईमानदारी की सरलता या बेवकूफी से तुलना करते थे। व्यावहारिक विज्ञान के क्षेत्र में वैज्ञानिकों की प्रत्येक पीढ़ी अपने से पहली पीढ़ी के कन्धों पर खड़ी होती है, पर यह बात सहनशीलता, नि:स्वार्थता और अच्छाई के लिए लागू नहीं होती।

विज्ञान को सर्वोपरि समर्पण चाहिए और इसलिए यह महत्वपूर्ण है कि समर्पण की भावना उत्पन्न करने और उसे बनाए रखने के लिए हर संभव प्रयत्न किया जाना चाहिए। जैसा कि पोलानी ने स्पष्ट शब्दों में बताया है कि विकासशील देशों में समुचित वैज्ञानिक वातावरण तैयार करना इतना आसान नहीं है। उनका कहना है, "जिन लोगों ने दुनिया के ऐसे हिस्सों का दौरा किया है, जहां वैज्ञानिक जीवन का विकास अभी शुरू हो रहा है, वे यह जानते हैं कि वैज्ञानिक परम्पराओं के अभाव में मार्गदर्शन करने वालों को कितना जी तोड़ परिश्रम करना पड़ता है। जहां आधुनिक देशों में प्रोत्साहन के अभाव में अनुसंधान कार्य सड़ता रहता है, वहां विकासशील देशों में समुचित निर्देशन के अभाव में अनुसंधान का काम छितरा जाता है। बरसात में जैसे अपने आप हरियाली उग आती है, उसी प्रकार यहां बिना काम के ही प्रसिद्धि मिल जाती है। मामूली उपलब्धियों अथवा केवल थोथी शेखी के आधार पर वैज्ञानिक प्रसिद्धि बढ़ती चली जाती है। नियुक्तियां और अनुसंधान कार्यों के लिए अनुदान जैसी बुनियादी बातें राजनीति और व्यापार के हाथ में खिलवाड़ बन जाती हैं। स्थानीय मेधा चाहे कितनी ही प्रतिभाशाली क्यों न हो, ऐसे वातावरण में उसका फलना-फूलना संभव नहीं है।"

आम आदमी को जिन समस्याओं का सामना करना पड़ता है, उनमें से सबसे पहली समस्या है—भूख और प्यास। रोटी की समस्या, यहां तक तो सुलझी है कि अनाज की पैदावार बढ़ी है पर गरीब और छोटे किसान को पूरे साल दोनों वक्त रोटी मिलने लगी हो, ऐसा नहीं लगता। पानी के भी हमारे देश में जितने साधन उपलब्ध हैं, वे सभी इस्तेमाल नहीं होते। कुछ जगहों पर पानी पीने योग्य नहीं है, दूसरी जगहों पर उसमें कुछ ऐसे यौगिक पाए जाते हैं जो स्वास्थ्य के लिए हानिकारक हैं। इस क्षेत्र में सारी दुनिया में बहुत अनुसंधान हुए हैं लेकिन अभी तक ऐसा कोई कदम नहीं उठाया गया कि हमारे सभी ग्रामीणों को शुद्ध पेयजल मिल सके। इसी तरह देहातों में मल-जल के निकास की कोई व्यवस्था नहीं है। शौचालय बनाने के लिए यद्यपि बहुत सस्ते साधन हमारी अनुसंधानशालाओं ने जुटा दिए हैं, लेकिन अभी तक उनका पूरी तरह से प्रचार नहीं हो पाया है। जब तक अनुसंधान के द्वारा बनाई गई चीजें इस्तेमाल में नहीं लाई जातीं, तब तक उनका मतलब ही क्या है?

विख्यात ब्रिटिश वैज्ञानिक लार्ड रदरफोर्ड ने अपने देश इंग्लैंड की तत्कालीन हालत के बारे में कहा था, "क्योंकि हमारे पास अमरीका के बराबर धन नहीं है, इसलिए हमें सूझ-बूझ से काम लेना होगा।" हमारी स्थिति तो और भी विषम है, हमें कोई भी कदम उठाने से पहले और अधिक सोचना होगा, तथा अधिक मनन करना होगा। हमें प्रयास करना चाहिए कि विज्ञान और प्रौद्योगिकी को अब तक भले ही किसी भी दिशा में ले जाया गया हो, पर अब आगे आम जनता के कल्याण में लगाया जाए। आकाश से उतर कर हमें सच्चाई की पथरीली जमीन पर खड़ा होना होगा। इस काम में कुछ ऐसे फैसले करने पड़ेंगे जो शायद कुछ के गले नहीं उतरें, बहुतों को नागवार भी गुजरें, लेकिन यह कोई नई बात नहीं है। ऐसा निर्णय तो विरला ही होगा, जो सबको अच्छा लगता हो।

वास्तव में वैज्ञानिक अनुसंधान ही विज्ञान को जनता के लिए उपयोगी बनाने का सीधा और सच्चा रास्ता है। इस क्षेत्र में अनेक देश हमसे आगे बढ़ गए हैं और यद्यपि हम शताब्दियों का कार्य केवल कुछ वर्षों में ही नहीं कर सकते, परन्तु हमें यह सीखना है कि मानव-सभ्यता अपने दुखों और कष्टों से केवल विज्ञान और उसके सही उपयोग से ही छुटकारा प्राप्त कर सकती है। ❑

ग्रामीण स्वास्थ्य संवर्धन में पंचायतों की भूमिका

सुदेश भारती

भारतीय ग्रामीण जनजीवन में पंचायतों का महत्वपूर्ण स्थान है। शासन और सत्ता का यह स्थानीय स्वरूप प्राचीन काल से ही लोकप्रिय रहा है। हमारे संविधान के अनुच्छेद 40 के माध्यम से राज्य को निर्देशित किया गया था कि वह देश में पंचायतों के विकास के लिए प्रयास करे। इसी क्रम में 2 अक्तूबर 1959 को नागौर में पंचायती राज संस्थाओं का तत्कालीन प्रधानमंत्री पंडित जवाहरलाल नेहरू ने उद्घाटन किया तथा प्राचीनकाल से चली आ रही ग्राम पंचायतों की इस व्यवस्था को आधुनिक स्वरूप देने की प्रक्रिया शुरू हुई। लोकतांत्रिक विकेंद्रीकरण को मूर्त रूप देने वाली ये संस्थाएं बरसों तक अनेक प्रकार की राजनीतिक, वित्तीय और प्रशासनिक समस्याओं की शिकार बनी रहीं। इस क्रम में 1993 में संसद द्वारा 73वां संविधान संशोधन अधिनियम पारित किया गया। इस संविधान संशोधन के माध्यम से पंचायती राज-व्यवस्था को वैधानिक दर्जा प्राप्त हो गया है। निश्चित समय पर चुनाव करवाने, जन-कल्याण कार्यक्रमों को गति देने तथा लोकतंत्र की जड़ों को मजबूती प्रदान करने में अब गांवों की ग्राम पंचायतें अधिक सक्षम हैं।

देश के पांच लाख से ज्यादा गांवों में जनसंख्या के आधार पर ग्राम पंचायतें गठित हैं। अकेले राजस्थान में ही 9,183 ग्राम पंचायतें, 35,000 गांवों के लिए कार्यरत हैं। ग्राम पंचायतों के माध्यम से ही अब अधिकांश सामुदायिक विकास कार्यक्रम संचालित हो रहे हैं। ग्राम पंचायतों को निर्देशित करने तथा विकास कार्यक्रमों को सार्थकता प्रदान करने के लिए राजस्थान में 237 पंचायत समितियां तथा 31 जिला परिषदें भी कार्यशील हैं। गांव की जनसंख्या की गणना, जन्म-मृत्यु-विवाह का पंजीकरण, पशु चरागाहों तथा सामुदायिक भूमि पर नियंत्रण, मेलों का आयोजन, खादी एवं कुटीर उद्योगों को प्रोत्साहन, पेयजल की व्यवस्था, सड़क और प्रकाश की व्यवस्था, गरीबी उन्मूलन के कार्यक्रम चलाना, सिंचाई और ऊर्जा स्रोत विकसित करना, शराब और हानिकारक प्रवृत्तियों पर नियंत्रण करना, महिला तथा बाल विकास, पिछड़े वर्गों का उत्थान, कुरीतियों को समाप्त करना, ग्रामीण स्वच्छता, स्वास्थ्य और परिवार कल्याण इत्यादि ग्राम पंचायतों के प्रमुख दायित्व हैं।

पंचायतों के लिए बताए गए इन कार्यों में स्वास्थ्य सर्वाधिक महत्वपूर्ण है। भारतीय संस्कृति में तो पहला सुख निरोगी काया को ही माना जाता है। अच्छे स्वास्थ्य के अभाव में कोई भी मनुष्य सुखी तथा प्रसन्न नहीं रह सकता है। चूंकि स्वास्थ्य की रक्षा व्यक्तिगत ही नहीं, अपितु सामूहिक प्रयासों से ही संभव है, इसलिए ग्राम पंचायतों को इस दिशा में बहुत गंभीरता से ध्यान देना चाहिए। 2 अक्तूबर 1952 से शुरू हुए सामुदायिक विकास कार्यक्रम तथा कालांतर में शुरू हुए विभिन्न स्वास्थ्य कार्यक्रमों में स्पष्ट रूप से कहा गया था कि सामुदायिक सहभागिता से ही ग्राम-विकास हो सकेगा। आजादी से पूर्व अधिकांश गांव आत्मनिर्भर थे। गांवों में धर्मशाला, सराय, स्कूल, तालाब इत्यादि जनता के सहयोग से ही बनते थे। दुर्भाग्य से आज हम हर कार्य के लिए सरकार की ओर ताकते हैं। सामुदायिक सहभागिता में हुई कमी के कारण ग्रामीण स्वास्थ्य भी गिरा है।

ग्रामीण जनसंख्या को बेहतर स्वास्थ्य सुविधाएं देने के लिए प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्र तथा स्वास्थ्य उप-केंद्र कार्यरत हैं। इन केंद्रों में कार्यरत स्वास्थ्य कार्यकर्ता तथा अन्य कर्मचारी तब तक सफल नहीं हो सकते, जब तक कि ग्रामीण जनता उन्हें सहयोग प्रदान न करे। चूंकि ग्राम पंचायत के पंचों तथा सरपंच का चयन ग्रामीण लोग मतदान द्वारा करते हैं अत: ये जनप्रतिनिधि ग्रामीणों के मार्गदर्शक तथा प्रेरणा स्रोत होते हैं। अधिकांश ग्रामीण अपने पंच तथा सरपंच की बातें ध्यानपूर्वक सुनते हैं तथा उस पर अमल भी करते हैं। ग्राम के सभी वयस्क व्यक्तियों का संगठन 'ग्राम सभा' कहलाता है। ग्राम सभा के माध्यम से ही ग्राम पंचायत की वार्षिक योजना तथा कार्यक्रम तैयार होते हैं। अत: ग्राम पंचायतों में कार्यरत पंचों तथा सरपंच को चाहिए कि अपनी ग्राम सभा की सलाह पर ग्रामीण स्वास्थ्य को उन्नत करने की योजना बनाएं। जब कोई भी योजना या कार्यक्रम स्वयं ग्राम सभा द्वारा निर्मित होगा तो प्रत्येक ग्रामवासी अपने स्तर पर सहयोग देगा। उसे ऐसा नहीं लगेगा कि उस पर कोई कार्यक्रम थोपा गया है।

गांव की गलियों में इकट्ठा होने वाला गंदा पानी, घरों से फेंका जाने वाला कूड़ा-करकट तथा इधर-उधर भटकते सूअर, कुत्ते इत्यादि रोग फैलाते हैं। मलेरिया जैसी घातक बीमारी हर वर्ष सैकड़ों लोगों की जान लेती है। मलेरिया से छुटकारा पाने के लिए हम सबको मिलकर प्रयास करना होगा। ग्राम पंचायतों के प्रयासों से बेकार इकट्ठा होने वाले पानी के

गड्ढों को भरवाया जा सकता है और उनमें डी.डी.टी. का छिड़काव इत्यादि हो सकता है। गांव के अध्यापक, पटवारी तथा शिक्षित बेरोजगार अपने ज्ञान के द्वारा स्वास्थ्य शिक्षा का प्रसार कर सकते हैं। यदि ग्राम पंचायतें प्रयास करें, तो बिना धुएं का चूल्हा तथा सामूहिक शौचालयों का निर्माण सरकार की सहायता से हो सकता है। गांवों की बढ़ती आबादी के कारण अब आस-पास के खुले मैदानों में मकान बन रहे हैं। इस प्रकार मलमूत्र त्यागने के लिए जगह का अभाव हो चुका है। वैसे भी खुले में मलमूत्र त्यागना स्वास्थ्य के लिए हानिकारक है तथा नैतिक दृष्टि से भी ठीक नहीं है। अतः ग्राम पंचायतें इस ओर प्रयास करें, तो ग्रामीण स्वास्थ्य में सुधार होगा। धूम्रपान तथा शराब सेवन की लत से मुंह तथा फेफड़ों के कैंसर के रोगियों की संख्या तो बढ़ ही रही है, साथ ही घरों में तनाव तथा आर्थिक तंगी भी पैदा हो रही है। नशे की इन कुप्रवृत्तियों से छुटकारा दिलवाने में ग्राम पंचायतें बहुत महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर सकती हैं। एक तो ग्राम पंचायतों में प्रायः बुजुर्ग तथा प्रभावी व्यक्ति पदासीन होते हैं, दूसरा ग्राम पंचायतों की बातें बाध्यकारी होती हैं। इस दिशा में अलवर जिले (राजस्थान) की कुछ पंचायतों ने गांव में शराब पर पूर्ण बंदिश लगाई हुई है। परिवार तथा गांव का वातावरण शांत रहता है, आपसी झगड़े कम होते हैं तथा तन-मन-धन की सुरक्षा भी बनी रहती है।

राजस्थान पंचायती राज अधिनियम 1994 के तहत दो से अधिक बच्चों वाले व्यक्ति पंचायती राज संस्थाओं में प्रतिनिधित्व नहीं कर सकते हैं। जिन पंचों या सरपंचों के दो से अधिक बच्चे हुए हैं, उनकी सदस्यता राज्य सरकार द्वारा समाप्त की गई है। मार्च 1997 तक 550 पंच, सरपंच तथा अन्य सदस्यों को इस कानून के द्वारा हटाया गया है। इस कानून का ग्रामीण परिवार कल्याण कार्यक्रम पर बहुत सकारात्मक प्रभाव पड़ रहा है। अपने स्थानीय नेताओं की प्रेरणा पाकर ग्रामीण लोग छोटे परिवार का महत्व समझ रहे हैं। इसी तरह भारत सरकार के स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय द्वारा प्रोत्साहन के लिए एक योजना तैयार की गई है। 1996 से शुरू हुई इस योजना के अंतर्गत जो ग्राम पंचायत एक वर्ष में अपने जिले में सबसे कम शिशु मृत्यु-दर, जन्म-दर तथा मातृ मृत्यु दर बनाए रखेगी, उसे दो लाख रुपये पुरस्कार-स्वरूप दिए जाएंगे। इस योजना से एक ओर ग्रामीण स्वास्थ्य का स्तर सुधरेगा, वहीं दूसरी ओर प्राप्त धनराशि से विकास के कार्य भी करवाए जा सकेंगे।

राजस्थान में ग्रामीण स्वास्थ्य संवर्धन के लिए 'चल शल्य चिकित्सा इकाई' अर्थात 'मोबाइल सर्जिकल यूनिट' कार्यरत है। यह इकाई गांव-ढाणियों में जाकर आंखों, पेट तथा नसबंदी इत्यादि के आपरेशन करती है। ग्राम पंचायतों को चाहिए कि वे अपने आस-पास की स्वास्थ्य समस्याओं से छुटकारा पाने के लिए गांव में कैंप लगवाएं। गांव में किसी प्रकार की महामारी फैलने पर या खास किस्म की स्वास्थ्य समस्या उत्पन्न होने पर ग्राम पंचायत को सतर्क हो जाना चाहिए। अपने स्थानीय स्वास्थ्य कार्यकर्ता तथा पास के प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्र के चिकित्सक से मिलकर गांव वालों में स्वास्थ्य शिक्षा का प्रचार करवाना चाहिए। जनसंख्या नियंत्रण, परिवार कल्याण, माता और शिशु स्वास्थ्य तथा संक्रामक रोगों की रोकथाम से संबंधित विषयों पर फिल्म, प्रदर्शनी तथा कठपुतली नृत्य इत्यादि की व्यवस्था भी ग्राम पंचायत, जिला अधिकारी के साथ मिलकर की जा सकती है। पेयजल स्रोतों में निसंक्रमण दवा डालने के लिए पंचायत को प्रयास करना चाहिए। ऐसा भी हो सकता है कि गांव वालों में किसी बीमारी या दवा के बारे में कोई वहम या भ्रांति हो, ऐसे में सरपंच तथा पंचों को विशेषज्ञों से मिलकर वास्तविकता का पता लगाना चाहिए। उसके बाद गांव वालों को समझाना चाहिए। गांववासी सरकारी कर्मचारी के बजाय अपने स्थानीय नेताओं की बात जल्दी मानते हैं। ग्रामीण स्वास्थ्य के आकलन के लिए समस्त प्रकार के आंकड़े भी ग्राम पंचायत के समक्ष रखने चाहिए। इनमें विवाह, शिशु मृत्यु, गर्भवती माताएं, जन्म लेने वाले बच्चे आदि शामिल हैं। ग्राम पंचायतें ग्रामीणों को टीकाकरण तथा परिवार नियोजन कार्यक्रम के महत्व के बारे में भी बेहतर ढंग से बता सकती हैं।

भारत में दुर्घटनाओं की वजह से भी बहुत मौतें होती हैं। अतः ग्राम पंचायत के सदस्य यह ध्यान रखें कि सड़क के आस-पास कोई बड़ा गड्ढा तो नहीं है, ट्रांसफार्मर तथा बिजली के तार किसी की पहुंच में तो नहीं हैं। इसी प्रकार कुंएं, तालाब, बावड़ी तथा जोहड़ इत्यादि की मुंडेर सुरक्षित होनी चाहिए। स्वास्थ्य को हानि पहुंचाने वाले तत्वों को ग्राम पंचायत द्वारा नियंत्रित करना चाहिए। ग्राम पंचायत भवन में स्वास्थ्य शिक्षा से संबंधित पोस्टर तथा सूचनाएं लगी हों तो लाभदायक सिद्ध हो सकती हैं। संतुलित खान-पान, अच्छा पहनावा, साफ-सफाई का महत्व तथा बुरी आदतों से छुटकारा जैसे प्रयास पंचायतें प्रभावी ढंग से कर सकती हैं। पंचायतें ग्रामीण जनता की आशा का केंद्र-बिंदु हैं। अतः ग्रामीण-स्वास्थ्य के स्तर को उच्च बनाए रखने के लिए ग्राम पंचायतों को सजग और प्रयत्नशील रहना चाहिए। ❑

लेखकों से

'कुरुक्षेत्र' के लिए मौलिक लेख, कहानी, कविता, संस्मरण, लघुकथा आदि रचनाएं टाइप कराकर दो प्रतियों में भेजिए। रचनाओं के साथ मौलिकता का प्रमाणपत्र संलग्न होना चाहिए। जिन रचनाओं के साथ ऐसा प्रमाणपत्र संलग्न नहीं होगा, उन्हें स्वीकार नहीं किया जा सकेगा। अस्वीकृत रचना लौटाने के लिए कृपया डाक टिकट लगा और अपना पता लिखा लिफाफा लगाना न भूलें। सभी रचनाएं संपादक, 'कुरुक्षेत्र', ग्रामीण क्षेत्र और रोजगार मंत्रालय, कृषि भवन, नई दिल्ली-110001 के पते पर भेजें।

—सम्पादक

प्याज : सब्जी भी, औषधि भी

डा. विजय कुमार उपाध्याय *

मानव द्वारा प्याज का उपयोग प्रागैतिहासिक काल से ही होता आ रहा है। भारत में भी काफी प्राचीन काल से ही इसे उपयोग में लाए जाने के प्रमाण मिलते हैं। हमारे वैदिक तथा पौराणिक ग्रंथों में इसकी चर्चा मिलती है। चरक तथा सुश्रुत जैसे प्रचीन आयुर्वेदशों ने अपने ग्रंथों में अनेक रोगों की चिकित्सा के लिए प्याज को उपयोग में लाने का उल्लेख किया है। परंतु हमारे देश में औषधि को छोड़कर सामान्य खान-पान में प्याज का उपयोग निषिद्ध माना जाता था। समाज के सभ्य लोगों के बीच इसका उपयोग सीमित तथा वर्जित था। ऐसा शायद इसकी गंध के कारण था।

आज यह बताना कठिन है कि प्याज का मूल स्रोत कहां था। अनुमान है कि शुरू-शुरू में इसकी उपज सिर्फ भारत तथा एशिया के कुछ देशों में ही होती थी जहां से धीरे-धीरे यह अन्य देशों में फैल गया। आजकल इसकी खेती संसार के लगभग सभी देशों में की जाती है और इसका उपयोग सब्जी तथा सलाद के रूप में व्यापक पैमाने पर किया जा रहा है।

प्याज दो प्रकार का होता है—सफेद तथा लाल। सफेद प्याज को लाल प्याज की तुलना में अधिक गुणकारी माना जाता है। इसे पैदा करने के लिए पहले इसके बीज को नवम्बर या दिसम्बर के महीने में बोया जाता है जिससे एक-डेढ़ महीने में बिचड़े (सीडलिंग) तैयार हो जाते हैं। फिर जनवरी-फरवरी में इन बिचड़ों को उखाड़ कर इनकी रोपाई की जाती है। इनकी रोपाई के लिए खेत में पर्याप्त पानी रहना आवश्यक है। रोपाई के बाद लगभग तीन महीने में प्याज तैयार हो जाता है। तब जमीन खोद कर इसे निकाल लिया जाता है।

प्याज में हमारे शरीर के लिए उपयोगी अनेक आवश्यक तत्व मौजूद रहते हैं। इसके रासायनिक विश्लेषण से पता चला है कि इसमें 1.2 प्रतिशत प्रोटीन, 0.1 प्रतिशत वसा, 11.6 प्रतिशत कार्बोहाइड्रेट, 0.18 प्रतिशत कैल्शियम, 0.05 प्रतिशत फास्फोरस, 0.7 मिली ग्राम प्रति 100 ग्राम लोहा, 130 माइक्रोग्राम प्रति 100 ग्राम विटामिन बी, 11 मिली ग्राम प्रति 100 ग्राम विटामिन सी तथा शेष जल रहता है। लाल प्याज में लोहे का परिमाण सफेद प्याज में मौजूद लोहे की तुलना में काफी अधिक रहता है।

आजकल प्याज का उपयोग मुख्य रूप से सलाद और व्यंजन के लिए किया जाता है। अधिकांश व्यंजनों में प्याज को मिलाने से स्वाद तथा लाभ दोनों में वृद्धि होती है। मांस तो सामान्य तौर पर बिना प्याज के पकाया ही नहीं जाता है। सलाद के रूप में इसका उपयोग घर से लेकर बड़े-बड़े होटलों तक में किया जाता है।

प्याज का उपयोग औषधि के रूप में भी किया जाता है। औषधि के रूप में इसका उपयोग काफी प्राचीन काल से ही होता आ रहा है। चरक तथा सुश्रुत जैसे प्राचीन चिकित्साविदों ने प्याज को शक्तिदाता, शरीर पुष्ट बनाने वाला तथा बुद्धिवर्द्धक बताया था। वाग्भट ने इसे बवासीर के रोगियों के लिए काफी लाभदायक बताया था।

प्याज प्लेग को रोकने में सक्षम होता है। ब्रिटिश चिकित्सा वैज्ञानिकों ने अपने अध्ययनों में पाया कि लंदन में जब प्लेग फैला तो प्याज तथा लहसुन की दुकानें इसकी संक्रामकता से अछूती रहीं। ई. क्युबोनी तथा सी. मौरियौंडी नामक दो इटालियन चिकित्सा वैज्ञानिकों ने क्षयरोग के इलाज हेतु प्याज के रस को काफी उपयोगी पाया है। हुबनर नामक एक जर्मन चिकित्सा वैज्ञानिक ने अपने द्वारा चलाए गए शोधों के आधार पर प्याज के रस को कृमिनाशक पाया है।

आयुर्वेदिक ग्रंथों में प्याज को वात, पित्त तथा कफ तीनों प्रकार के दोषों के शमन हेतु लाभदायक पाया गया है। प्याज के नियमित सेवन से आंतों की क्रियाशीलता बढ़ती है। इसके उपयोग से कब्ज दूर रहता है जिसके फलस्वरूप बवासीर तथा चर्म रोग में लाभ होता है। प्याज के नियमित सेवन से नेत्र की ज्योति भी बढ़ती है। प्याज के रस को मधु के साथ मिलाकर कुछ दिन तक लगातार सेवन करने से वीर्य तथा धातु संबंधी कमजोरी दूर होती है। पीलिया में भी प्याज का सेवन लाभदायक पाया गया है। प्याज के सेवन से लू लगने का डर नहीं रहता। दाद तथा खुजली पर प्याज का रस मलने से आराम मिलता है। राई अथवा सरसों के तेल के साथ प्याज का रस मिलाकर मलने से जोड़ों के दर्द में लाभ पहुंचता है। ❑

सबको हाथ की पांच उंगलियों की तरह रहना चाहिये। ये हैं तो पांच, लेकिन काम सहस्त्रों का कर लेती हैं क्योंकि इनमें एकता है।

—विनोबा भावे

* प्राध्यापक, भूगर्भ, इंजीनियरी कालेज, भागलपुर

आर.एन./708/57
डाक-तार पंजीकरण संख्या : डी (डी एल) 12057/98
आई.एस.एस.एन. 0971-8451
पूर्व भुगतान के बिना डी.पी.एस.ओ. दिल्ली में डाक में डालने
की अनुमति (लाइसेंस) : यू (डी एन)-55

R.N./708/57
P&T Regd. No. D (DL) 12057/98
ISSN 0971-8451
Licenced under U (DN)-55
to post without pre-payment at DPSO, Delhi-54

श्रीमती सुरिन्द्र कौर, निदेशक, प्रकाशन विभाग, पटियाला हाऊस, नई दिल्ली-110001 द्वारा प्रकाशित और मुद्रित।
मुद्रक तारा आर्ट प्रेस, बी-4 हंस भवन, नई दिल्ली-110002. प्रकाशन स्थान : 655, 'ए' विंग, निर्माण भवन,